ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 20 दिसम्बर 2015 आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र सप्ताह रविवार 20 दिसम्बर 2015 से 26 दिसम्बर 2015

मा.शु. –10 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 51, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

91 वां वार्षिकोत्सव हुआ सम्पन्न आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग का

आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली का 91 वां वार्षिकोत्सव वृहस्पतिवार 26 नवम्बर 2015 से रविवार 29 नवम्बर 2015 तक सोत्साह मनाया गया। चार दिनों तक चलने वाले इस उत्सव में हजारों आर्य जनों ने भाग लिया। रविवार 29 नवम्बर 2015 को यज्ञ की पुर्णाहुति हुई जिसके मुख्य यजमान आर्य समाज (अनारकली), आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं डी.ए.वी. कालेज मैनेजिंग कमेटी नई दिल्ली के यशस्वी प्रधान डॉ. पूनम सूरी एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मणि सूरी थे। उत्सव के समापन अवसर पर बोलते हुए उन्होंने कहा कि आर्य शब्द का अर्थ है अर्थात् श्रेष्ठ सभी श्रेष्ठ एवं अच्छे बनें अगर मुस्लिम हैं तो श्रेष्ठ मुस्लिम बनें, अगर सिख हैं तो श्रेष्ठ सिख बनें और अगर ईसाई हैं तो श्रेष्ठ ईसाई बनें अर्थात् संसार में रहने वाला हर इन्सान श्रेष्ठ बने तथा सभी के साथ अच्छा व्यवहार करे तभी संसार का कल्याण होगा। मुख्य अतिथि ने इस सफल आयोजन के लिए श्री अजय सूरी (कार्यकारी प्रधान) ब्रि.ए.के अद्लखा (मंत्री) श्री मती स्नेह मोहन (सहमंत्री) श्री एस.के. शर्मा (महामंत्री प्रादेशिक सभा) एवं डॉ. निशा पेशीन (प्रधान, दिल्ली उपसभा को सम्मानित किया।

उत्सव में दर्शन योग महाविद्यालय आर्यवन रोजड़ गुजरात के निदेशक स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक के ''मानसिक शान्ति कैसे प्राप्त करें'' विषय पर चारों दिन सारगर्थित प्रवचन हुए। स्वामी जी ने लोगों द्वारा पूछे गये प्रश्नों एवं शंकाओं के सटीफ उत्तर दिये एवं शंकाओं का समाधान किया।

इस वर्ष वार्षिक उत्सव पर छात्रों के लिए चित्र कला श्लोक उच्चारण एवं नुक्कड़ नाटक प्रतियोगिताओं का आयोजन हुआ जिनमें दिल्ली तथा एन.सी.आर. के 34 विद्यालयों से 500 से अधिक छात्र–छात्राओं ने भाग लिया। इन मुकाबले में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले छात्र–छात्राओं एवं स्कूलों को अन्तिम सत्र पर मुख्य अतिथि के रूप में पधारे (अनारकली) के प्रधान डॉ. पूनमसूरी ने पुरस्कृत किया।

डी.ए.वी. स्कूलों के प्रधानाचार्यों की एक विचार गोष्ठी सम्पन्न हुई जिसमें डी.ए. वी. स्कूल, द्वारका की प्रि. श्रीमती मोनिका मोहन ने **''यज्ञ का वैज्ञानिक आधार''**, डी.ए.वी. स्कूल वसन्त कुंज की प्रि श्रीमती अंजू पुरी ने **'शिक्षा और स्वामी दयानन्द का सदाचार दर्शन'**, डी.ए.वी. स्कूल रामकृष्ण पुरम की प्रि. अनीता चोपड़ा ने **''नारी सशक्तिकरण और आर्य समाज''** तथा डी.ए.वी. स्कूल जसोला विहार के प्रि. श्री वी.के बर्थवाल ने **''विश्व के बदलते परिप्रेक्ष्य में आर्य समाज की भूमिका''** विषय पर अपने–अपने विद्धतापूर्ण विचार व्यक्त किये।

28 नवम्बर2015 को विश्व प्रसिद्ध सन्तूर वादक पं. भजन सपोरी का सन्तूर वादन हुआ जिसमें इनकी शिष्या सुनिधि ने साथ दिया। डॉ. पूनम सूरी ने इन दोनों को शाल ओढ़ाकर सम्मानित किया तथा वेद भाष्य का एक सेट व Alumini United की ओर से एक स्मृति चिह्न भी भेंट स्वरूप दिया। उत्सव में श्री अविरल एवं सुकृति, श्री विजय भूषण आर्य, अनिल सोनी तथा श्री सुनील कुमार के सुन्दर भजन हुए।

उत्सव में चारों दिन डी.ए.वी. प्रबन्धक समिति के अनेक पदाधिकारी तथा अनेकों आर्य समाज के सदस्यों ने भाग लिया। चारों दिन आर्य समाज (अनारकली का सभागार श्रोताओं की भीड़ से खचाचाच भरा रहा। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति के पदाधिकारियों तथा निदेशकों ने विशेष रूप से इस कार्यक्रम में अपनी उपस्थिति दर्ज की। श्री राम नाथ सहगल, श्री टी.आर गुप्ता, श्री प्रबोध महाजन प्रिं. मोहन लाल श्री सत्य पाल आर्य, श्री अजय सहगल आदि की उपस्थिति प्रेरणास्पद रही। इन के अतिरक्त एवं दिल्ली एन.सी.आर. के डी.ए.वी. स्कूलों से भी प्रिंसिपलों तथा सैकड़ों आर्य जनो ने उत्सव में भाग लिया। वार्षिकोत्सव का यज्ञ पं.घनश्याम आर्य सिद्धान्ताचार्य एवं श्री प्रमोद शास्त्री के ब्रहमत्व में सम्पन्न हुआ। उत्सव के सभी सत्रों का सफल संचालन आर्य समाज (अनारकली) के मंत्री बि.ए.के अदलखा ने किया। अन्त में शान्तिपाठ के बाद उत्सव में पधारे सभी आर्यजनों ने प्रतिभोज में भाग लिया तथा सुस्वादु भोजन का आनन्द लिया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ९

संपादक – **पूनम सूरी**

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार 20 दिसम्बर, 2015 से 26 दिसम्बर, 2015

हे सोम! हृदय–कलश में प्रवेश करो

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरिताति पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।

ऋग् ९.७०.९

ऋषिः **रेणुः वैश्वामित्रः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **जगती**।

● **(सोम)** हे सोम परमात्मन्! **(तू)**, **(वृषा)** वर्षक **(होता हुआ)**, **(देववीतये)** दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, **(पवस्य)** प्रवाहित हो, **(इन्द्रस्य)** आत्मा के, **(हार्दि)** हृदय–रूप, **(सोमधानं)** सोम–कलश में, **(आविश)** प्रविष्ट हो।, **(बाधात्)** बाधे जाने से, **(पुरा)** पहले, **(नः)** हमें, **(दुरिता अति)** पापचरणों से लंघाकर, **(पारय)** पार करदे। **(क्षेत्रवित्)** मार्ग का ज्ञाता, **(विपृच्छते)** विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, **(दिशः)** दिशाओं को, **(आह हि)** बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करनेवाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय–रूप सोम–कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम–पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी–कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप–भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप–कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप–मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे 'दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप–ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार–रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछनेवाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा–ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन–पोत भव–सागर में डूबकर नष्ट–भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचाओ। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भक्त और भगवान

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में हमने पढ़ा ईश्वर को वह प्राप्त करता है जो दूसरों के हित में सदा तत्पर रहता है। समझ में आने वाली बात यह भी है जो सच्चे हृदय से उस जनार्दन को प्यार करता है, वह उस जनता को प्यार क्यों न करे जो जनार्दन की कृति है ?

विश्वप्रेम की भावना जाग उठे तो विश्वरूप का प्रेम स्वयं उसमें आ जाता है, परन्तु एक शर्त है कि यह विश्वप्रेम दिखावे के लिए न हो, वास्तविक हो। जब ऐसा हो तो प्रभु दर्शन देते हैं जरूर क्योंकि वे कहीं दूर तो हैं नहीं। जो सबसे अधिक निकट है, उनसे भी अधिक निकट है, वह हर ओर है, हर समय है, प्रत्येक स्थान पर है।

प्रभु दर्शन करना हो तो अपने हृदय में दूसरों का उपकार करने की इच्छा उत्पन्न करो। उसी प्रकार दूसरों से प्यार करो जिस प्रकार अपने आपसे करते हो। ऐसा करने से सच्चा प्रेम उत्पन्न होता है।

अब आगे...

मेरी प्यारी माताओ तथा सज्जनो!

इस कथा को प्रारम्भ करते समय मैंने आपको बताया कि पिछले डेढ़ सौ वर्षों में, विशेषकर सन् 1880 के पश्चात् विज्ञान ने जो उन्नति की, उसने बहुत–से आविष्कार संसार को दिए; परन्तु इन आविष्कारों ने मानव को कोई सच्चा सुख दिया हो, ऐसा तो प्रतीत नहीं होता। छोटा–सा बच्चा जैसे सरकस को देखकर अपने–आप को भूल जाता है, उसी प्रकार विज्ञान के इस सर्कस को देखकर अपने–आप को भूल गए हम। परन्तु मानव के जीवन का जो उद्देश्य है वह तो पूरा नहीं हुआ। मनुष्य चाहता क्या है? शरीर का सुख, मन की शान्ति और आत्मा का आनन्द। यही तीन बातें तो वह चाहता है। विज्ञान की उन्नति से तीनों में से कोई भी बात मिली हो, ऐसा तो दिखाई नहीं देता। विज्ञान के प्रत्येक आविष्कार ने मनुष्य को शारीरिक सुख देने का प्रयत्न किया है अवश्य। प्रकाश सरलता से हो जाता है, गर्मियों में बर्फ मिल जाती है, सर्दियों में हीटर जल उठते हैं, मासों की यात्रा घण्टों में हो जाती है, सहस्रों मील दूर बैठे लोगों से हम बातें कर लेते हैं, टेलीविज़न की सहायता से मीलों दूर के किसी स्टूडियो में होने वाले कार्यक्रम को देख लेते हैं। मनुष्य के लिए पहले की अपेक्षा बहुत–सी सरलताएँ हो गई हैं अवश्य, परन्तु शरीर का सुख मिल गया हो ऐसी बात तो हुई नहीं। बीमारियाँ आज भी हैं, बुढ़ापा आज भी है, मृत्यु आज भी है, फिर विज्ञान का दिया हुआ यह शारीरिक सुख है क्या? और वह शरीर क्या है जिसके लिए विज्ञान ने इतना संघर्ष किया? मैं यह नहीं कहता कि शरीर को आराम देना बुरा है। इसे सुख दो, इसे सात्त्विक भोजन दो, इसके स्वास्थ्य को ठीक रखो। अच्छी बातें हैं ये, परन्तु देखो भाई, इसे सुख से रखो या दुःख से, एक दिन इसे जाना है अवश्य–

कबिरा नौबत आपनी,
दस दिन लेउ बजाय।
ये पुर पट्टन ये गली,
बहुरि न देखन आय।।

यह सब–कुछ जाएगा अवश्य। बड़े–बड़े राजाओं और महाराजाओं का चला गया, योद्धाओं और सेठों का चला गया, फिर दूसरों की कौन कहे! यहाँ से थोड़ी ही दूर तो महरौली खण्डहर है, तुगलकाबाद का सुनसान किला है, हौज खास का उजाड़ प्रदेश है, कभी वहाँ भी लोग रहते थे, उनके भी शरीर थे, वे भी अपने शरीर को सुख पहुँचाने का यत्न करते थे। उनके घरों में शहनाइयाँ बजती थीं, राग अलापे जाते थे और आज–

सातों शबद जो बाजते,
घर–घर होते राग।
ते मन्दिर खाली पड़े,
बैठन लागे काग।।

इस शरीर का अभिमान किसलिए? इसे सुख से रखो या दुःख से, एक दिन–

हाड जले ज्यों लाकड़ी,
केश जले ज्यों घास।
सब तन जलता देखकर,
भया कबीर उदास।।

परन्तु उदास होने से लाभ क्या? यह तो कच्चा है भाई, टूटेगा अवश्य–

यह तन काचा कुम्भ है,
लिए फिरे तू साथ।
ढीका लागा फूटिगा,
कछू न आया हाथ।।

और फिर थोड़ी देर के लिए मान लो शरीर को सुख मिल गया, तो भी हुआ क्या? वास्तव में यह सुख मिला नहीं। कुछ सरलताएँ मिली अवश्य हैं, सुख नहीं मिला। परन्तु यदि मिल भी जाए तो सुख का मूल्य क्या है? सुख और दुःख की वास्तविक अनुभूति तो मन में होती है। मन में सुख न हो, मन में शान्ति न हो तो शरीर के सुखों का एक कौड़ी भी मूल्य नहीं। अब यह मानसिक सुख और मानसिक शान्ति आपके पास है या नहीं। यह स्वयं सोचकर देखिए, अपने हृदय में झाँकिए, सोचकर देखिए कि क्या आपके मन में शान्ति है, सुख है? प्रायः हम कहते हैं कि मैं तो दुःखी हूँ, परन्तु दूसरे लोग सुखी हैं। सुनो! यह बात बिल्कुल असत्य है। महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने संसार की वास्तविकता को बहुत सुन्दरता से व्यक्त किया–

नदीर ए पार कहे करया पुकार,
जे शुख जगते शै शकल ओ पार।
ओ पार कहे छोड़या दीर्घ श्वास,
शुखेर शक्ल खानी परे पार।।

"नदी का यह किनारा पुकारकर कहता है कि संसार में जितना सुख है वह सब–का–सब दूसरे किनारे पर है: मैं ही दुःखी हूँ, सुख दूसरी ओर है। दूसरा किनारा भी श्वास लेकर कहता है कि सुख का भण्डार तो परले किनारे पर है, मेरे पास कुछ भी नहीं।"

अपनी बुद्धि, दूसरे का धन सबको अधिक प्रतीत होता है, परन्तु ध्यान से देखिए तो पता चलेगा कि यहाँ कोई भी सम्पत्तिवाला नहीं, सब कंगाल हैं, प्रत्येक हृदय में दुःख की ज्वाला है, प्रत्येक आँख में आँसू है। इस बात को शैख फरीद ने देखा और पुकार उठे–

फरीदा मैं तौं जानिया,
मैं दु:खी सुखी सब जग्ग ।
ऊँचे चढ़–चढ़ देखिआ,
तौं घर–घर एहो अग्ग ।।

तुम्हारा विज्ञान किसी के भी मन को शान्ति नहीं दे सका। प्रत्येक घर में आग जल रही है। देखो या न देखो, प्रत्येक घर से धूआँ उठ रहा है। शारीरिक सुख मिला नहीं, मानसिक शान्ति मिली नहीं और आत्मिक आनन्द का तो अर्थ भी विज्ञानवालों को पता नहीं, फिर वह मिलेगा कहाँ से? इसलिए मैं कहता हूँ पिछले डेढ़–दो सौ वर्षों में विज्ञान ने जो उन्नति की, इसे देखकर मनुष्य अपने–आप को इस प्रकार भूल गया है, जैसे सरकस का खेल देखकर बच्चा थोड़ी देर के लिए प्रसन्न हो जाता है। इसके अतिरिक्त और कुछ हुआ नहीं। मनुष्य के वास्तविक उद्देश्य से इस विज्ञान का और इसके आविष्कारों का रत्ती भर सम्बन्ध नहीं।

मनुष्य–जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है, यह भी मैंने पिछले दिनों बताया था। वेद भगवान् ने प्रश्न और उत्तर के रूप में इस उद्देश्य का वर्णन किया है–

प्रश्न होता है–**"कस्त्वा युनक्ति?"**–किसने जोड़ा है तुझे? मनुष्य का यह शरीर किसने दिया है?

उत्तर मिलता है–**"स त्वा युनक्ति"**–उसने जोड़ा है तुझे, मानव–शरीर उस प्रभु ने दिया है।

तब प्रश्न होता है–**"कस्मै त्वा युनक्ति"**–किसलिए जोड़ा है तुझे? और उत्तर मिलता है –**"कस्मै त्वा युनक्ति?"**–उसी के लिए जोड़ा है तुझे, उस ईश्वर को प्राप्त करने के लिए, उसका दर्शन पाने के लिए, उसे अपना बनाने के लिए यह शरीर मिला है।

ऐसी दशा में शरीर की ओर से प्रमाद करना, उसकी रक्षा न करना और उद्देश्य को प्राप्त किये बिना उसे नष्ट करने का प्रयत्न करना बिल्कुल गलत है। शरीर की रक्षा होनी चाहिए, इसके स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिए, परन्तु यह नहीं भूलना चाहिए कि शरीर केवल साधन है, मानव–जीवन का लक्ष्य है प्रभुदर्शन–

इयं ते यज्ञिया तनूः

यह शरीर प्रभु–दर्शन पाने के लिए मिला है क्योंकि और किसी भी शरीर में प्रभु–दर्शन नहीं होता। यह शरीर अन्नमय कोश कहलाता है। इसके आगे प्राणमय कोश, फिर मनोमय, तब विज्ञानमय और फिर आनन्दमय कोश में आत्मा के साथ–साथ परमात्मा रहता है। साथ–साथ रहने पर भी आत्मा तब तक परमात्मा को देख नहीं पाता जब तक इसकी मैल दूर न हो जाए। सूर्य की किरणों को देखिए, वे प्रकाश देती हैं, गर्मी देती हैं, आग नहीं लगाती। परन्तु उन किरणों को दाहक शीशे पर केन्द्रित करके एक स्थान पर डालिए तो वहाँ आग जल उठती है। यही दशा मन की है। उसे सीधा करके ठीक अवस्था में रखो तो प्रभु का दर्शन हो जाता है। इसी शरीर में हो जाता है, कहीं बाहर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती–

मन मथुरा दिल द्वारिका,
काशी काया जान।
दस द्वारे का देहरा,
ता में ज्योति पछान।।

इतना निकट रहने पर भी यदि वह दिखाई नहीं देता तो इसलिए कि स्वयं आत्मा में कुछ दोष आ गए हैं। ये दोष क्या हैं और किस प्रकार दूर होते हैं, यह हमने ऋग्वेद के 7. 86. सूक्त में देखा। तब अथर्ववेद के छठे मण्डल में भक्त को यह प्रार्थना करते हुए भी सुना–

उन्मादयत मरुत उदन्तरिक्ष मादय।
अग्न उन्मादया त्वमसौ मामनु शोचतु।।
(अथर्व वेद 6।।30।4)

ऐ वायु, मुझे पागल बना दे। ऐ आकाश, मुझे उन्मत्त कर दे। ऐ अग्नि, मुझे प्रेम–विभोर कर दे और मेरे साथ–साथ उस ईश्वर को भी प्यार से व्याकुल कर दे जिसे मैं प्यार करता हूँ।

और साथ ही ईश्वर आत्मा से प्यार करता है। यदि उसे आत्मा से प्रेम न होता तो यह सुन्दर संसार कभी उत्पन्न न होता। यह पृथिवी, ये तारे, ये सूर्य और चन्द्र, फूल और फल, नदियाँ और पर्वत, सब उसने आत्मा के लिए तो बनाए हैं, अपने लिए तो उसे आवश्यकता नहीं। सबको बनाकर उसके भीतर वह बैठा है–

अपां मध्ये तस्थिवांसं तृष्णाविदज्जरितारम्।
मृका सुक्षत्र मृकय।। (ऋ.1।89।5)

दाएँ–बाएँ, ऊपर–नीचे, बाहर–भीतर, सब ओर तू ही है मेरे प्रीतम! फिर मैं तुझे देख क्यों नहीं पाता? पानी के अपार पारावार में रहकर भी मैं प्यासा क्यों हूँ? मेरी प्यास मिटा दे स्वामिन्! मेरी रक्षा कर! और सत्य ही वह रक्षा करता है–

सुनीतिभिर्नयसि त्रायसे जनं यस्तुभ्यं दाशान्न तमंहो अश्नवत्। (ऋ.2।23।4)

परमात्मा अच्छे मार्ग पर ले जाता है, उसकी रक्षा करता है जो अपने– आपको उसके लिए समर्पित कर देता है–

सुपुर्दम बतो मायए ख्वेश रा।
तो दानी हिसाबे कमो बेश रा।।

जो उस पर भरोसा करके, उसे अपना सुनेता मानकर और अपना सर्वस्व समझकर चलता है, प्रभु उसे अपनाते हैं–

अग्ने नय सुपथा, रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान।
युयोध्यस्मज्जुहराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्ति विधेम।। (यजु. 40।16)

हे अग्निदेव! हे प्रकाशस्वरूप! ले चल जिधर तू ले–जाना चाहता है। मेरी अपनी कोई इच्छा नहीं, मेरा अपना कोई ज्ञान नहीं। मेरा कल्याण किसमें है यह तू जान, मैंने अपने–आप को तेरे समर्पित कर दिया।

जब इस प्रकार भक्त आत्मसमर्पण कर देता है, तब ईश्वर का उत्तरदायित्व हो जाता है कि उसे ठीक मार्ग पर ले जाये, उसे भले और बुरे की पहचान कराए, बुराई से रोककर भलाई की ओर ले चले। यही नहीं, अपितु आत्म–समर्पण करने वाले के योगक्षेम की जिम्मेदारी भी प्रभु पर आ जाती है। ऋग्वेद में स्पष्ट कहा है–

अहं दाशुषे वि भजामि भोजनम्।
(ऋ. 10.48.1)

मैं तो दाश्वान् (आत्मसमर्पण करने वाले) पुरुष को भोजन (भोग्य–पदार्थ) बाँटता फिरता हूँ।

कल मैंने महर्षि दयानन्द के वे शब्द सुनाए थे जो उन्होंने 'सत्यार्थ–प्रकाश' में लिखे और जिससे उन्होंने बताया कि ईश्वर किस प्रकार आत्मा को मार्ग दिखाता है।

फिर यह भी बताया कि आत्म–समर्पण का अर्थ क्या है? किस प्रकार यह आत्मसमर्पण होता है? सच्चे प्रेम से; ईश्वर के लिए सच्चा प्यार जाग उठे तो आत्मसमर्पण स्वयमेव हो जाता है। तब मार्ग मिलता है, प्रभु का दर्शन भी होता है। उसके लिए कहीं बाहर जाने की आवश्यकता नहीं। किसी मन्दिर, मस्जिद या तीर्थ में जाने की आवश्यकता नहीं। मानव–शरीर के इस मन्दिर में ही तुम्हारे भगवान् बैठे हैं। परन्तु देखो, केवल तुम्हीं मनुष्य नहीं, केवल तुम्हारा शरीर ही ईश्वर का मन्दिर नहीं, प्रत्येक मनुष्य–शरीर भगवान् का मन्दिर है। प्रत्येक मनुष्य के भीतर वे मनमोहन बैठे हैं। इसलिए निश्चय करो कि किसी भी मनुष्य से, भगवान् के किसी भी मन्दिर से हम घृणा नहीं करेगे; सबके कल्याण का यत्न करेगे। इसीलिए महर्षि दयानन्द ने कहा कि **'सारे संसार का उपकार करना हमारा कर्त्तव्य होना चाहिए।'**

महर्षि के इस महान् सन्देश को समझने का प्रयत्न करो। उन्होंने वेद को संसार के सामने रखा तो इसलिए कि वेद किसी एक सम्प्रदाय के लिए नहीं। उसमें कहीं भी यह नहीं लिखा कि तुम हिन्दू बनो, ईसाई बनो, बौद्ध, जैनी या मुसलमान बनो, अपितु बार–बार यही लिखा है कि अच्छे मनुष्य बनो। महर्षि ने वेद की इस भावना को लेकर कहा–"मनुष्य उसको जानना जो दूसरों की हानि और लाभ में अपनी हानि और लाभ समझे।" विश्वप्रेम की यह भावना उत्पन्न हो जाए– अमेरिका यदि समझे कि रूस का लाभ अमेरिका का लाभ है और यदि रूस समझे कि अमेरिका की हानि रूस की हानि है–तो सोचकर देखो, इन ऐटम बमों और हाइड्रोजन बमों की आवश्यकता कहाँ रहती है? इन युद्ध की तैयारियों और सैनिक संगठनों का कोई भी कारण कहाँ रहता है?

शेष अगले अंक में....

वैदिक प्रार्थना

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु।।
अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।।

अथर्व. 19.15.5–6

O God, make me fearless.
Let me not fear my friends or foes.
Let me not fear
from the known or the unknown
during day or night.

Let me not fear anyone
and let me have friends
on all sides.

अभय करो प्रभु, अभय करो हमें।
भूमि से न भय हो, आकाश से न भय हो।
मित्रा से न भय रहे, शत्रु से न भय हो।
भय हो न सामने से, पीछे से न भय हो।
दायें से न भय हो, न बायें से ही भय हो।

दिन में न भय हो, न रात में भी भय हो।
शत्रु मेरा कोई न हो, सब ही दिशाएं मेरी
मित्रा बनें और मेरी मित्राता की जय हो!

इदं राष्ट्राय इदन्न मम का मूर्तरूप थे अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द

● प्रो. ओमकुमार आर्य

उन्नीसवीं शताब्दी में आर्य समाज को ऐसे होनहार सपूत एवं विलक्षण प्रतिभा के धनी महापुरुष मिले जो 19वीं शताब्दी के अंतिम दो दशकों के दौरान एवं 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक 25–30 वर्षों तक अपनी आभा से विश्व इतिहास के पन्नों को जगमगाते रहे। मानवता का पथ प्रदर्शन करते हुए तथा इस देश के धर्म, संस्कृति के गौरव को बढ़ाकर इसकी भव्य परम्पराओं को और अधिक सुदृढ़ एवं समृद्ध बनाया देशवासियों के आत्मविश्वास एवं स्वाभिमान को जगाकर स्वाधीनता प्राप्ति के पथ को प्रशस्त किया। ऐसा करते समय उन्होंने अदम्य राष्ट्र–भक्ति का परिचय दिया और राष्ट्र के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। एसे कुछ उल्लेखनीय नाम है– पंजाब केसरी लाला लाजपत राय, महात्मा हंसराज, पं. गुरुदत्त, स्वामी श्रद्धानन्द, सशस्त्र क्रांति के अग्रदूत श्यामजी कृष्ण वर्मा आदि। इनमें इस लेख के चरित नायक स्वामी श्रद्धानन्द ने तो गुरुकुल शिक्षा प्रणाली, शुद्धि आंदोलन, दलितो द्धार एवं कुल मिलाकर अपने प्यारे राष्ट्र की भलाई, उन्नति एवं स्वतंत्रता के लिए सब कुछ राष्ट्र पर वार दिया, इस हद तक वार दिया कि वे 'इदं राष्ट्राय इदन्न मम' की भावना के जीवन्त प्रतीक बन गए इस भावना के वे वास्तव में ही मूर्तरूप थे, ऐसा कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है। ऐसा करने की उनको सशक्त प्रेरणा मिली थी। उनके गरुवर युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द के दिव्य व्यक्तित्व एवं कृतित्व से।

आइए, कुछ एसे उदाहरण एवं घटना स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन से देखिए जो इस कथन की पुष्टि करते हैं कि वे (स्वामी श्रद्धानन्द) 'इदं राष्ट्राय इदन्न मम' के प्रतीक थे, मूर्तरूप थे, हाड़ मांस के चलते फिरते पुतले थे। स्वामी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व तथा राष्ट्र के प्रति किए गए उनके महनीय कार्य एवं दिए गए अपूर्व बलिदान को ठीक से समझने के लिए हमें उनके जीवन को इन चार कालखण्डों में विभाजित करके देखना होगा।

1. जन्म से (1856) लगभग सन् 1886 तक। एक उद्दण्ड, स्वेच्छाचारी, बिगड़ैल एवं व्यसन–ग्रस्त युवक के रूप में।
2. माहात्म्य (महात्मौचित गुण विशेष पात्रता) प्राप्ति के पथ का पथिक सन् 1881 से लगभग 1895 तक
3. महात्मा मुंशीराम, 1895 से लगभग 1915 तक
4. संन्यास से 'सर्वं वै पूर्णं स्वाहा पर्यन्त'। सन् 1916 से 23 दिसम्बर 1926 तक।

उपर्युक्त विभाजन अपनी सुविधा की दृष्टि से किया गया है, यह कोई अन्तिम अथवा किसी वस्तुनिष्ठ पैमाने पर आधारित नहीं है। स्वामी जी परोपकार, देशोद्धार और राष्ट्र सेवा को प्रारम्भ से ही अपना लक्ष्य बनाए हुए थे। हाँ, युवावस्था में किसी योग्य गुरु के मार्गदर्शन के अभाव में भटक गए थे। किन्तु बरेली में महर्षि दयानन्द से भेंट हो जाने के पश्चात् अपने प्रश्नों का सही समाधान उन्हें मिल गया और वे तीव्र गति से महात्मा कोटि को प्राप्त हुए। उन्होंने पूरी तरह समझ लिया कि–

1. मैकाले द्वारा प्रवर्तित शिक्षा प्रणाली हमारी गुलामी का मुख्य कारण है और इससे हमारा सांस्कृतिक, धार्मिक, नैतिक पतन हो रहा है। यह हमारे सर्वनाश का मूल हेतु है। अतः इस स्थान पर गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली लागू की जानी चाहिए। फलस्वरूप उन्होंने 1902 में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना करके शिक्षा–जगत् में एक ऐतिहासिक क्रांति का बिगुल बजाया।

2. आर्य/हिन्दू जाति जन्माधारित जातिकुप्रथा के कारण भयंकर अनैतिकता का शिकार है तथा चालाक, कुटिल विधर्मी धर्मान्तरण के द्वारा हमें अधिक कमजोर कर रहे हैं। पाखण्डियों ने जाने के दरवाजे खुले छोड़ रखे हैं और आने के द्वार सब बन्द कर दिए हैं। स्वामी जी ने अविलम्ब शुद्धि आंदोलन प्रारम्भ करके विधर्मियों में खलबली पैदा कर दी। इस शुद्धि आंदोलन के चलते ईसाई, मुसलमान उनके खून के प्यासे बन गए और अन्ततोगत्वा मतांध मुस्लिम युवक अब्दुल रशीद की पिस्तौल की गोलियों से देश और वैदिक धर्म की पावन बलि वेदि पर 23 दिसम्बर 1926 को अपने प्राण न्यौछावर करके वे अमर हुतात्माओं की पंक्ति में अग्रगण्य हस्ताक्षर के रूप में अंकित हो गए।

3. महर्षि दयानन्द का यह कथन कि विदेशी राज्य चाहे कितना भी अच्छा हो या अच्छा होने का दावा करता हो, वह स्वदेशी राज्य का स्थापनापन्न नहीं बन सकता, अर्थात् –

Good Government (by foreigners) is no substitute for self governance.

इसलिए देश की स्वाधीनता के लिए वे प्राणपण से स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़े और अन्त तक मोर्चे पर डटे रहे। ये तीन – गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली की पुनःस्थापना, शुद्धि आंदोलन तथा स्वाधीनता के लिए संघर्ष – वे प्रमुख बिन्दु थे जिनके इर्द–गिर्द स्वामी जी का समस्त जीवन बलिदान पर्यन्त घूमता रहा। अपने आराध्य राष्ट्रदेव की भक्ति और उपासना के लिए वे इन तीनों मोर्चों पर एक निर्भीक, दुर्जेय योद्धा बनकर जूझते रहे और 'इदं राष्ट्राय इदन्न मम' की एक अभूतपूर्व, प्रेरणादायक, अनुकरणीय मिसाल आने वाली पीढ़ियों के लिये छोड़ गए। वे स्वाधीनता संग्राम के महानायक ही नहीं अपितु राष्ट्रमेध यज्ञ के निष्ठावान् होता भी थे। जिन्होंने वेद की इस उक्ति के अनुसार– 'वयं तुभ्यं बलिहृत स्याम' अपना बलिदान राष्ट्र हेतु देकर राष्ट्र को स्वयं के लिए सर्वमेधयज्ञ में परिवर्तित कर दिया। मातृभूमि के सच्चे सपूत की तरह अपने राष्ट्र की स्वतंत्रता एकता एवं अखण्डता के लिए–'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' की वेदोक्ति के अनुरूप अपना र्सवस्व 'इदं राष्ट्राय इदन्न मम' कहकर राष्ट्र को समर्पित कर दिया। अपनी चल–अचल संपत्ति राष्ट्र–निर्माण के महायज्ञ में आहुति संग भेंट कर दी, अपने दोनों बेटे (जो मातृविहीन थे, स्वामी जी ही उनके पिता भी थे और माँ भी थे। हरिश्चन्द्र और इन्द्र अन्यों के साथ गुरुकुल में प्रविष्ट करवा दिए, यहाँ का जीवन उस समय में बहुत ही कठोर अनुशासन, परिश्रम, तप त्याग और नियम संयम का जीवन था। यह इसलिए आवश्यक था कि यदि गुरुकुलीय शिक्षा राष्ट्र के नव निर्माण का एक–मात्र उपाय है तो तप की उस भट्ठी में से सबको गुजरना होगा, कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता। समाज के आजकल के तथा कथित कर्णधारों को स्वामी जी के शुचि, स्वच्छ एवं पारदर्शी आचरण से सीख ग्रहण करनी चाहिए। उनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं था आजकल के स्वार्थी नेताओं की तरह नहीं कि कथनी यदि पूर्वोन्मुख है तो करनी पश्चिमोन्मुख।

राष्ट्र के लिए किए गए महान् कार्यों की दृष्टि से देखें तो सन् 1918 से 1919 उनके लिए सर्वाधिक घटना–प्रधान वर्ष थे। वे दिन –'रौलेट एक्ट' के प्रति तीव्र आक्रोश एवं प्रचण्ड विरोध के दिन थे। ब्रिटिश सरकार का क्रूरतापूर्ण दमन चक्र भी जनाक्रोश के सैलाब को रोक नहीं पा रहा था। ऐसा ही एक सशक्त विरोध प्रदर्शन 30 मार्च 1918 के दिन चाँदनी चौक क्षेत्र (दिल्ली) में स्वामी जी के नेतृत्व में आयोजित किया गया। चाँदनी चौक गवाह है कि संन्यासी की सिंह गर्जना से गौरी हुकूमत काँप उठी थी तथा बंदूकों और संगीनों से पूरी तरह बेखौफ उक्त प्रदर्शन सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ था। स्वामी जी सबके सर्वमान्य नेता थे हिन्दुओं के भी और मुसलमानों के भी। उनके मुखारविन्द से निकले 'हम' शब्द का अभिप्राय था 'ह' से हिन्दू और 'म' से मुस्लिम। वे प्रथम और अन्त तक के अन्तिम हिन्दू नेता थे जिन को मुसलमान भाइयों ने ऐतिहासिक जामा मस्जिद की मिम्बर से वेदमंत्र बोल कर सभा को संबोधित करने की स्वीकृति दी थी। स्वामी जी ने 'ओं त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो' वेद मंत्र बोल कर व्याख्यान दिया था और फिर 6 मार्च 1918 को फतेहपुरी मस्जिद में भी स्वामी जी को व्याख्यान के लिए आमंत्रित किया गया था। कुछ गैर–मुस्लिम नेता तुष्टीकरण का राग अलापते–2 संसार से चले गए किंतु जामा मस्जिद से सभा को संबोधित करने का कोई अवसर उन्हें जीवन पर्यन्त नसीब नहीं हुआ।

इतना ही नहीं यह स्वामी जी का दम खम ही था कि जब 'जलियाँवाला बाग' के रोंगटे खड़े कर देने वाले पैशाचिक खूनी काण्ड से हर छोटा बड़ा भयभीत था और शानदार सफलता के साथ अधिवेशन संपन्न करवाया। वे अपने प्रिय राष्ट्र और राष्ट्र वासियों के लिए कोई भी जोखिम उठा सकते थे। वे सच्चे राष्ट्र भक्त और राष्ट्रवादी संन्यासी थे। ईश्वर में उनका अडिग विश्वास था, वे महर्षि दयानन्द और वैदिक धर्म के निष्ठावान् अनुयायी थे। अथर्व वेद के काण्ड 12 सूत्र मंत्र 1–63, यजु 22/22 ऋग्वेद 1/80/ सभी मंत्र, तथा अन्यान्य वेद मंत्रों में राष्ट्र विषयक जो उदात्त अवधारणा एवं परिकल्पना है स्वामी जी का उन सबमें अटूट एवं अडोल विश्वास था। उन मंत्रों को उन्होंने मात्र पढ़ा ही नहीं था अपितु उनको जीवन में जीया। इन मंत्रो से ही उन्होंने 'इदं राष्ट्राय इदन्न मम' का पाठ सीखा था जिस पाठ की भावना के वे प्रतीक बन गए थे, मूर्तरूप बन गए थे। उसी पथ का पथिक बनकर अंततोगत्वा 23 दिसम्बर 1926 के दिन वे राष्ट्र के लिए अपना जीवनोत्सर्ग करके अमरता के अमिट हस्ताक्षर बनकर इतिहास के पृष्ठों पर अंकित हो गए। हम महान राष्ट्रनायक को कोटिशः नमन करते हैं इन शब्दों में–

संन्यासी तुम ऊँचा कर गए भारत भू का माथ।
युगों–युगों तक गाएगा इतिहास तुम्हारी गाथ।।

संकट की घड़ियों में ये आकाश के चाँद सितारे तेरा आहवान किया करेंगे। अपनी भुजा पसारे जब तक बहेगी हिम गिरि से गंगा की निर्मल धारा। तब तक अमर रहेगा स्वामी प्रेरक नाम तुम्हारा।। तुम प्रहरी थे देशधर्म के तुम अमर बलिदानी। तुम युग–नायक, युग प्रवर्तक तुम अदम्य सेनानी।। तेरे पद चिन्हन अमिट रहेंगे क्रूर काल की छाती पर। 'इदं राष्ट्राय इदन्न मम' से गुंजित रहेंगे अवनी अंबर।।

1607/7, जवाहर नगर,
(पटियाला चौक, जींद (हरियाणा) –126102
09416294347,01681–226147

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका–ईश्वर, उपासना करना कठिन लगता है। जबकि हम दिनभर मन में सांसारिक बातें खूब सोचते हैं। वह सरल लगता है। ऐसा क्यों है?

समाधान–हम जिस कार्य का अधिक अभ्यास करते है, वह कार्य हमारे लिए सरल हो जाता है। आपने देखा होगा कि कुछ लोग शारीरिक कार्य करते हैं, कोई पैकिंग का कार्य करता है। फटाफट वस्तु उठाई, डिब्बे में डाली। डिब्बे में पैक की और भेज दी। माताएँ स्वेटर बुनती हैं, उनको अभ्यास हो जाता है तो फटाफट स्वेटर बुनती हैं, जल्दी–जल्दी सलाई चलती है। तात्पर्य है–जिस कार्य को हम अभ्यास में ले आते हैं, वह कार्य तीव्रता और सरलता से होता है और जिस कार्य का अभ्यास नहीं होता, वह कार्य मंद गति से होता है और कठिन लगता है। जब कहा जाता है कि–मन में मंत्रोच्चारण करो, वेद मंत्रों को याद करो, ईश्वर की उपासना करो। आपने इसका अभ्यास बहुत कम किया है, इसलिए आपको यह कठिन लगता है और मन में दिनभर उल्टे–सीधे विचार करआते रहते हैं, उसका अभ्यास सारे दिन किया है। बहुत किया है, इसलिए वह सरल लगता है। तो चाहे अच्छी बात हो, या बुरी बात हो, मन में खूब तेजी से होती रहती है। सांसारिक बातें खूब चलती रहती हैं, इसलिए वह सरल लगती हैं। उनका लम्बे समय तक अभ्यास किया गया। और ईश्वर उपासना का, मंत्रोच्चारण का, उनके अर्थों को याद करने का अभ्यास नहीं किया, इसलिये वे कठिन जान पड़ते है। यह अंतर है दोनों में। यदि ईश्वर उपासना के मंत्रों का आप बार–बार अभ्यास करें, तो कुछ समय के बाद वे भी आपको सरल लगेंगे। फिर कठिनाई नहीं आएगी, अभ्यास की बात है, और दूसरी बात है, वैराग्य की। संसार में राग–द्वेष बहुत अधिक है। वैराग्य है या नहीं। ईश्वर में रुचि है या बहुत कम है। इसलिए ईश्वरोपासना करना कठिन लगता है। संसार में राग–द्वेष अधिक होने के कारण सांसारिक विचार उठाना सरल लगता है।

शंका–जब हम वैदिक गणना के अनुसार इस संसार की आयु एक अरब 96 करोड़, इतना वर्ष कहते हैं,तो यह गणना हमारी पृथ्वी अर्थात् सौरमंडल की है अथवा समस्त दृश्य–अदृश्य ब्रह्माण्ड की?

समाधान– इसका उत्तर है, इस पृथ्वी की गणना तो यह है ही। इस पृथ्वी को उत्पन्न हुए इतना समय हो गया। महर्षि दयानंद जी के ग्रन्थों को देखने से पता चलता है, कि महर्षि दयानन्द जी पूरे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति एक साथ मानते हैं और पूरे ब्रह्माण्ड की प्रलय भी एक साथ मानते हैं। ऋग्वेद भाष्य–भूमिका आदि जो ग्रंथ हैं, उनके आधार पर ऐसा लगता है, कि यह सारे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का काल है।

शंका–सृष्टि केवल एक है या बहुत सारी हैं?

समाधान–वैसे तो 'सृष्टि' शब्द का अर्थ ही पूरा 'ब्रह्मांड' है। पूछना यह चाहिए था कि सौर मंडल एक है, या बहुत सारे हैं। सृष्टि तो एक ही है। पूरा ब्रह्माण्ड एक सृष्टि है। इसमें बहुत सारे सौर मंडल हैं। उनमें से एक हमारा यह सौर मंडल है, जिसमें हम रहते हैं। एक सूर्य और उसका परिवार, यह हुआ एक सौर मंडल। अरबों तारे–(अरबों सूर्य) और उनके परिवार। यानि अरबों की संख्या में सौर मंडल एक आकाशगंगा में हैं। और ब्रह्माण्ड में ऐसी–ऐसी अरबों आकाशगंगाएँ हैं। तो इतना विशाल यह ब्रह्माण्ड है। इसे हम समग्रतः सृष्टि कह सकते हैं। सृष्टि शब्द से संपूर्ण ब्रह्माण्ड का ग्रहण हो जाएगा। पूरी सृष्टि एक ही है।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

पिछले अंक से आगे

चरित्र निर्माण हेतु ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना मंत्रों पर विचार

● सरोज आर्या वर्मा

दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःख क्या है?

दुःख क्या है? पीड़ा का होना, स्वतंत्रता का न होना, अभिलाषाओं की पूर्ति न होना, जन्म–मरण के बन्धन में पड़ना दुःख है। न्यायदर्शनकार दुःख का लक्षण करते हुए लिखते हैं–**'बाधना लक्षणं दुःखम्'** (न्यायदर्शन 1/1/2) महर्षि मनु के अनुसार– **'सर्वं परवशं दुःखम्'** (मनु. 4/160)

परवश (पराधीनता) अर्थात् स्वंत्रता का न होना दुःख है।

दुःख तीन प्रकार के होते हैं –

1. आध्यात्मिक दुःख– इसके दो भेद हैं। **पहला शारीरिक–** भूख–प्यास, अतृप्त इच्छा, रोगादि का होना। **दूसरा मानसिक–** ईर्ष्या, घृणा, अज्ञान आदि। **2. आधिभौतिक दुःख–** भौतिक पदार्थों, दूसरे प्राणियों से होने वाले दुःख। **3. आधिदैविक दुःख–** प्रकृति से प्राप्त होने वाले दुःख जैसे– आंधी, तूफान, भूकम्प, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, ज्वालामुखी।

दुःखों का मूल कारण क्लेश ही है। अर्थात् अविद्या (संसार के अनित्य पदार्थों के नित्य मानना, दुःख देने वाले विषयों को सुखदायी मानना तथा मन, अहंकार को ही आत्मा मानना) राग, द्वेष, मोह, मत्सर आदि ही दुष्कर्मों को कराने वाले तथा पुनः–पुनः जन्म धारण कराने वाले होकर दुःखों के कारण बनते हैं।

मनुष्य अज्ञान के वशीभूत हो पाप अर्थात् दुष्कर्म, दुराचार कर्म करता है। मनुष्य की प्रवृत्ति पापकर्म = दुष्कर्म की ओर क्यों होती है? इसका उत्तर देते हुए वेद में कहा है–**क्रत्वः समह दीनता प्रतीपं जगमा शुचे। मृडा सुक्षत्र मृडय।।** (ऋ. 7/89/3) अर्थात्– जीव अपनी दुर्बलता, दीनता अथवा अल्पज्ञता के कारण कर्तव्य मार्ग से भटक जाता है।

दुर्गुण– दुर्गुण या दुष्कर्मों का परोक्ष या अपरोक्ष प्रभाव अन्य जीवों पर पड़ता है। मानव मन–वचन और कर्म से दुष्कर्म करता है।

मन के दोष

दूसरे के पदार्थों पर ध्यान देना, दूसरे के अनिष्ट की कामना करना, ईश्वर की सत्ता को नकारना, मन में काम, क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या–द्वेष, लोभ–मोह, छल–कपट, दूसरे के कष्ट या दुःख में प्रसन्न होना तथा उन्हें कष्ट में देखने की इच्छा करना। मन के ये समस्त दोष मानव के शत्रु हैं, चरित्र निर्माण में बाधक हैं। अतः मानव को काम को संयम से, क्रोध को क्षमा से, लोभ को संतोष से, मोह को विवेक से, अहंकार को नम्रता से और ईर्ष्या–द्वेष को अन्तःप्रेरणा से जीतना चाहिये। इसी प्रकार स्तुतियोग्य आचरण एवं व्यक्ति की प्रशंसा न करना तथा अनुकरण न करना, पराया धन–वैभव एवं स्त्री पर कुदृष्टि रखना आदि भी मानवीय दुर्गुण हैं।

वाणी के दोष

कटु वचन बोलना, अपशब्द, परनिन्दा, आत्मा के विरुद्ध अर्थात् आत्मा से कुछ हो परन्तु वाणी से कुछ और बोलना, वाणी के द्वारा अनादर करना तथा असत्याचरण। वाणी के दोष दूर हों एतदर्थ तुलसीदास लिखते हैं–

तुलसी मीठे वचन ते,
सुख उपजत चहुँ ओर।
वसीकरन यह मंत्र है तजदे वचन कठोर।।

शरीरस्थ कर्मेन्द्रियों द्वारा दुष्कर्म

चोरी, बलात्कार, उठाईगीरी, राहजनी, लूटमार,व्यभिचारऔरहिंसा।दूसरेकीवस्तुको बलपूर्वक अपने अधिकार में लेना, अनुचित के लिये किसी को भयभीत करना तथा हिंसा आदि के द्वारा प्राण लेना अथवा शारीरिक हानि पहुँचाना। मनुष्य दुष्कर्मों से बचा रहे इसके लिये वेद ने सात मर्यादायें निर्धारित की हैं।

सप्त मर्यादाः

कवयंस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यंहुरो गात्। आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीके पथां विसर्गे धरुणेषु तस्थौ।। (ऋ 10/5/6) (अथर्व. 5/1/6)

चोरी न करना, व्यभिचार, ब्रह्मज्ञानी मनुष्य की हत्या, शराब का सेवन, भ्रूण हत्या, बुरे कर्म का बार–बार करना, पाप करके झूठ बोलना आदि सात बातों का निषेध किया है।

दुर्व्यसन

कुसंगति, अज्ञान, स्वाध्याय हीनता, अभक्ष्य पदार्थों का सेवन यथा– तम्बाकू अर्थात् बीड़ी–सिगरेट का सेवन, अभक्ष्य पदार्थ– मांस–अण्डा, नशीले पदार्थ– मद्य, चरस, गांजा, भांग जैसे पदार्थों का सेवन, दुर्व्यसन में गिने जा सकते हैं, सिनेमा–दूरदर्शन आदि भी दुर्व्यसन में ही आते हैं। इससे धन की हानि तो होती ही है साथ ही शरीर और बुद्धि का भी नाश होता है।

वेद के उक्त मंत्र में स्पष्ट उपदेश है कि मनुष्य स्वयं अज्ञानतावश दुष्कर्म की ओर प्रवृत्त होता है। मनुष्य पापकर्म के लिए एकान्त की तलाश करता है क्योंकि वह मानता है कि उसके द्वारा एकान्त में किये गये पाप कर्मों को देखने वाला कोई नहीं है। परिणामस्वरूप न चाहते हुए भी कर्मफल भोगरूप दुःख उठाते हैं। दुर्गुणी व्यक्ति ही दुर्व्यसनों में पड़ता है और दुःख को प्राप्त होता है। यदि उसे अपने मन में दृढ़ विश्वास हो जाए कि सृष्टि का संचालक व व्यवस्थापक परमात्मा सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी होने से सर्वद्रष्टा और सर्वशक्तिमान् है तो वह पाप से डरने लगे।

शेष पृष्ठ 06 पर

प्रेरक जीवन के धनी–स्वामी श्रद्धानन्द

● डॉ. महेश विद्यालंकार

इस देश को महापुरुषों की लम्बी धारा प्राप्त रही है, जिन्होंने धर्म,जाति व संस्कृति की रक्षा के लिए सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। इसी परम्परा में स्वनामधन्य स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान और कार्यों को देश व सम्मान से स्मरण करता है। वे त्याग, दृढ़ता और आत्मविश्वास की मूर्ति थे। उनका तप–त्याग, तपस्या, श्रद्धा, वीरता, दृढ़ता, राष्ट्र–प्रेम आदि वंदनीय हैं। उनकी गुरुभक्ति गृहणीय है। कार्य प्रशंसनीय हैं। उनका बलिदान है। उनका जीवन–चरित्र पठनीय उनकी दुर्गुण व दुर्व्यसनों से मुक्ति सराहनीय है। उनकी देश–धर्म जाति की सेवा अतुलनीय है। उनका सर्वस्व समर्पण योग्य है। उनका संगीनों के सीना खोलकर खड़े हो जाना नमनीय है। सम्पूर्ण जीवन अतुलनीय है।

जब इस महापुरुष के पूर्व जीवन आवलोकन करते हैं तो एक ऐसे व्यक्ति का चित्र बनता है जिसमें कई बुराइयाँ नास्तिकता, खान–पान की अपवित्रता की मलीनता और भोग वासना जीवन जीने वाला। धर्म कर्म, भक्ति, परोपकार आदि से दूर रहने वाला। जब ऋषिवर दयानन्द के चुम्बकीय व अगाध ज्ञान का स्पर्श हुआ।

ज्ञान–यक्षु खुल गए। कालाकल्प हो गया। जीवन की दिशा बदल गई। जीवन का सार ही बदल गया। मुन्शीराम पर प्रभु की कृपा हुई। वे पतित जीवन से उठकर प्रेरक की ओर चल पड़े। आस्तिकता के संस्कार जाग उठे। यह तभी संभव हुआ जब उनके हृदय में सत्य, श्रद्धा, विवेक, जागरूकता आदि भाव आए। यदि हम चाहें तो स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन से कुछ सीख सकते हैं।

हमारे जीवन में अनेक दुर्गुण, व बुराइयां घर किए बैठी हैं। जो खोखला कर रही हैं। हम अपने सत्य स्वरूप को भूलते जा रहे हैं। इतना सुनने, पढ़ने और देखने के बाद भी हमारा सुधार नहीं हो पा रहा है। क्योंकि हमारे अन्दर छोड़ने का संकल्प, व्रत व दृढ़ता नहीं है। जब मुन्शीराम श्रद्धानन्द बन सकते हैं तो हम क्यों नहीं ऊपर उठ सकते हैं? बात कहने की नहीं करने की है। वे वाक्शूर नहीं, कर्मशूर थे। जो कहा उसे कर दिखाया। उनके जीवन का कथनी करनी का पक्ष संसार को असत्य से सत्य की ओर, अधर्म से धर्म की ओर, नास्तिकता से आस्तिकता की ओर, अश्रद्धा से श्रद्धा की ओर चलने की प्रेरणा देता रहेगा। ऐसा व्रती, संकल्पी, कर्मठ चरित्र इतिहास में दुर्लभ मिलता है जो इतने पतन से इतना ऊँचा उठा हो, जिसने इतिहास में लम्बी लकीर खींच दी हो। जिसने ऊँचाई की सभी बुलन्दियाँ छू ली हों। जिसने दुर्दान्त डाकुओं को भी साहस–वीरता, तप–त्याग आदि में अपनी ओर आकर्षित कर लिया हो। जो हिंसक जन्तुओं को भी अपने सान्निध्य में बैठाने का साहस रखता हो।

स्वामी श्रद्धानन्द ऋषि दयानन्द के सच्चे अर्थ में उत्तराधिकारी थे ऋषि ने जो आदर्श, मन्तव्य, सिद्धान्त, विचार आदि दिए, उन्हें इस महापुरुष ने क्रियात्मक साकार रूप दिया। इनका जीवन संघर्षों, कठिनाइयों व चुनौतियों से निकला। किन्तु उस महापुरुष ने चरैवैति–चरैवैति का मूल मंत्र कभी नहीं छोड़ा। अपने गुरु का मान बढ़ाया। वैदिक विचार धारा को यश दिलाया। गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना करना, उस समय शिक्षा के क्षेत्र में महान क्रान्ति थी। उनकी यह कल्पना ऋषि की शिक्षा पद्धति पर आधारित थी। जिस गुरुकुल का उद्देश्य था वैदिक ज्ञान विज्ञान, आदर्शों, मानवता और सच्चरित्र वाले देश को नागरिक प्रदान करना। गुरुकुल के लिए स्वामी श्रद्धानन्द ने अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। इस संस्था ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की। गुरुकुल कांगड़ी स्वामी श्रद्धानन्द का स्मारक है। किन्तु आज वह स्मारक ढह रहा है। हम बेखबर हैं। इतिहास साक्षी है कि स्वामी श्रद्धानन्द ही ऐसे महापुरुष थे कि जिन्हें जामामस्जिद से हिन्दू–मुस्लिम एकता के भाषण का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके एकता के प्रयास सदा स्मरणीय रहेंगे। चांदनी चौक में जुलूस का नेतृत्व करते हुए गौरांग सिपाहियों के सामने सीना तानकर खड़े हो जाना और कहना–"चलाओ मेरे सीने पर गोलियाँ"। स्वामी श्रद्धानन्द जैसा निडर निर्भीक देशभक्त ही कह सकता है। शुद्धि आन्दोलन में प्राणों का खतरा मोल लेने वाले श्रद्धानन्द में अपार वीरता, दृढ़ता, साहस, सेवा, बलिदान आदि भाव कूट–कूट कर भरे थे। उन्होंने आर्य संस्कृति शिक्षा, धर्म, राजनीति, समाज सुधार, नारी शिक्षा, शुद्धि आन्दोलन आदि क्षेत्रों में नव–निर्माण की चेतना फैलाई।

उनके बलिदान पर जो श्रद्धांजलियाँ और उद्गार देश–विदेश से प्राप्त हुए थे उनसे सहज ही उनके व्यक्तित्व और कृतित्त्व की झलक मिलती है। किसी ने उन्हें राष्ट्र निर्माता, किसी ने महान स्वतन्त्रता सेनानी, किसी ने पथ प्रदर्शक, किसी ने वीरता और बलिदान की मूर्ति, किसी ने सत्य श्रद्धा और दृढ़ता का रूप, किसी ने निर्भय सेनापति, किसी ने हिन्दू जाति का चौकीदार, किसी न सभी का हितैषी, किसी ने हिन्दू–मुस्लिम एकता का पक्षधर, किसी ने सामाजिक राष्ट्रीय सुधारक, किसी ने सेवा और त्याग की मूर्ति, किसी ने देदीप्यमान नक्षत्र, किसी ने अमर शहीद किसी ने प्रेरक गुरु आदि विशेषताओं से सम्मानित और स्मरण किया था।

प्रतिवर्ष श्रद्धानन्द बलिदान दिवस आता है, जलसे–जुलूस तक सिमटकर रह जाता है। कहीं रचनात्मक, प्रभावात्मक और निर्माणात्मक चेतना व ललक नजर नहीं आ रही है। आज के जीवन और जगत के सन्दर्भों में आर्य समाज तथा उनकी विचारधारा की प्रबल आवश्यकता है क्योंकि अन्धकार गुरुडम पाखण्ड अधर्म आदि तेजी से बढ़ रहा है। आर्य समाज ही इन प्रश्नों का सटीक उत्तर दे सकता है। आज आर्य समाज को आवश्यकता है– प्रेरक, आदर्श, चरित्रवान्, सेवाभावी, तपस्वी, त्यागी, मिसनरी भावना वाले अधिकारियों, कार्यकर्त्ताओं, उपदेशकों, विद्वानों, पुरोहितों आदि की। इन सबका बड़ी तेजी से अभाव हो रहा है। जो हैं वे सभी अपने समाज, आश्रमों, संस्थाओं व संगठनों का रास्ता जनता को दिखा रहे हैं। दयानन्द और आर्य समाज का रास्ता दिखाने वाले कम हो रहे हैं। यह आर्य समाज के लिए महती चिन्तनीय चिन्ता होनी चाहिए। स्वामी श्रद्धानन्द का कथन बड़ा सटीक लगता है।

आर्य समाज को नेताओं की नहीं सेवकों की जरूरत है। कैसी विचित्र विडम्बना है कि इतने स्कूल, कालेज, गुरुकुल संस्था संगठन आश्रम समाजें हैं किन्तु एक भी हंसराज श्रद्धानन्द, गुरुदत्त लेखराम, दर्शनानन्द नहीं बन पा रहा है। यही मूल में भूल हो रही है। हम ऊपर से आर्य समाजी बन रहे हैं, अन्दर आर्य न बन पा रहे हैं, न बना पा रहे हैं।

ऐसे अवसर आते हैं हमें आत्म निरीक्षण की प्रेरणा देने के लिए। संकल्प और व्रत दुहराने के लिए। प्रेरक महापुरुषों के व्यक्तित्व और कृतित्व से सेवा त्याग, उपकार भावना व विनम्रता का पाठ सीखने के लिए। श्रद्धानन्द बलिदान दिवस का यही सन्दर्भ है कि हम भी देश, धर्म, जाति, संगठन संस्था व गुरु के लिए कुछ देने की, त्याग करने की भाव–भावना अपने अन्दर जागृत करें।

बी–जे/29 पूर्वी शलीमार बाग
नई दिल्ली–110052

☞ *पृष्ठ 05 का शेष*

चरित्र निर्माण हेतु ईश्वर...

बुराई से भलाई की ओर चलने की प्रार्थना

चरित्र निर्माण हेतु एवं परमानन्द की प्राप्ति हेतु समस्त दुर्गुण, दुर्व्यसन को दूर करना होगा, तभी उसमें शुभ गुण–कर्म स्थिर रह सकेंगे क्योंकि दुरितों को दूर करने से ही मानव निर्माण और राष्ट्र निर्माण संभव है। वेदों में सर्वाधिक प्रार्थना पाप निवारण की है, लेकिन इसका यह अभिप्राय नहीं कि प्रार्थना से किये हुए पाप नष्ट हो जाते हैं अर्थात् उनका फल प्राप्त नहीं होता है। अपितु इसका अभिप्राय यह है कि पापों को दूर करने अर्थात् उनको दूर हटाने के लिए प्रार्थना की जाती है। ईश्वर की उपासना से पाप परे भाग जाते हैं, उसके पापकर्म भटकते नहीं। आगे से फिर पाप न करने का संकल्प लेता है। आगे होने वाले पापों से बचाने के लिए भक्तों को प्रेरणा देने के लिये वेद में पाप निवारण के मंत्र हैं।

त्वं नः पाह्यंहसो दोषावस्तरधायतः। दिवा नक्तमदाभ्यः।। (ऋ. 7/15/15)

अर्थ– हे प्रभो! तू पाप से हमारी रक्षा कर, पाप की कामना करने वाले व्यक्ति से भी रात–दिन हमारी रक्षा कर।

ईश्वर का सर्वव्यापकत्व तथा सर्वज्ञत्व गुण पाप दूर करने में सहायक होता है क्योंकि सर्वव्यापक परमेश्वर हमारे द्वारा कहीं भी किये गये पापकर्मों को जान लेता है। उस सर्वज्ञ प्रभु की न्याय व्यवस्था से हमारे पाप हमें दण्डित करने का कारण बनते हैं। अतः निष्पापता की प्रार्थना में प्रभु की व्यापकता पर भक्त का हमेशा ध्यान जाता है। परमेश्वर की सर्वव्यापकता तथा सर्वज्ञता को जानकर और उस पर दृढ़ विश्वास करके उपासक कभी पापकर्म में प्रवृत्त नहीं हो सकता।

इस मंत्र में सब प्रकार के दुरितों को दूर करने और भद्र की प्रार्थना की गई है। शेष मंत्र में परमेश्वर की स्तुति है। महर्षि दयानन्द ने **'दुरितानि'** का अर्थ दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःख किया है।

दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःख सम्पूर्णरूप से दूर हो जाय और साधक को **'भद्र'** अर्थात् सुख प्राप्त हो, उसके लिये केवल प्रार्थना ही पर्याप्त नहीं है, उपासक को अपने आचरण में परिवर्तन करना होगा। मन अति चंचल है। क्षणभर में दूर–दूर तक जाने वाला है, बड़ी कठिनता से वह वश में आता है। मन के बिना मानव संसार का कोई भी कार्य नहीं कर सकता है। यही मन सुख और दुःख का कारण है। जब यह विषय विकारों से परिपूर्ण होता है तो शुभ कर्मों से दूर हो जाता है और जब इन विषय विकारों से रहित हो जाता है तो शुभकर्मों की ओर प्रवृत्त होता है। अतः मन की गति का मार्ग बदलने से उपासक कुमार्ग से सुमार्ग की ओर अग्रसर होगा।

शेष अगले अंक में....

वैदिक धर्म और गीता

● कामता प्रसाद मिश्र

वैदिक धर्म एक सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा मानवता के कल्याण एवं उत्थान के लिए है। परमात्मा की नित्य वाणी को वेद एवं श्रुति नाम से जाना जाता है। वेद परम कारुणिक, सर्वज्ञ सर्वव्यापक एवं सर्वशक्तिमान परमात्मा की पवित्र वाणी है, जो ज्ञान और भाषा से संयुक्त है। प्रत्येक कल्प के प्रारम्भ में परमेश्वर ऋषियों के ह्रदय में इसका प्रकाश करता है। यह अनन्त तथा नित्य है और परमात्मा के प्रेरणा का फल है। जैसा परमात्मा स्वयं व्यापक और आकाशवत विस्तार वाला है, उसी प्रकार यह वेद वाणी भी विस्तृत है अर्थात वेद का ज्ञान अनन्त है।

वेद चार हैं उन्हे ऋग्वेद यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद नाम से जाना जाता है। यह परम पवित्र आत्मा वाले चार ऋषियों क्रमशः अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा को परमात्मा से यह ज्ञान 'वेद' रूप में प्राप्त हुआ। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। जो सम्पूर्ण ज्ञान–विज्ञान का भण्डार है। वेद के ही सिद्धान्तों, मान्यताओं तथा विचारों पर आधारित वैदिक धर्म है। अन्य जितने भी सम्प्रदाय मजहव, रिलीजन हैं वे किसी के नाम पर किसी व्यक्ति के विचार पर आधारित हैं। जो उस मजहव तथा सम्प्रदाय के मानने वालों के कल्याण की बात करते हैं, परन्तु वैदिक धर्म विश्व के सम्पूर्ण मानव के कल्याण की बात करता है। वैदिक धर्म किसी जाति, सम्प्रदाय व्यक्ति तथा किसी एक देश के कल्याण की बात नहीं करता बल्कि सम्पूर्ण विश्व के सर्वागीण कल्याण की कामना करता है। वेद कहता है– **"कृण्वन्तो विश्वमार्यम."** ऋ. 9.63.5 अर्थात सम्पूर्ण विश्व के मनुष्यों को सदाचारी, श्रेष्ठ, ज्ञानी, मनीषी अहिंसक तथा मानवतावादी बनाओ।

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इस तथ्य को गंभीरता से भली भाँति समझा था कि जब तक पृथ्वी पर 'वेद' का प्रकाश नहीं फैलेगा तव तक मत मतान्तरों में विभाजित मानव समाज शान्ति एवं कल्याण के मार्ग का अनुसरण नहीं कर सकेगा। अतः उन्होने वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना परमधर्म बताया। उन्होंने घोषणा की कि वेद स्वतः प्रमाण हैं, इसके प्रमाण के लिए प्रमाणान्तर की आवश्यकता नहीं है।

संसार में दो अमोघ शक्तियाँ है–शब्द और कृति। परमात्मा ने मनुष्य को दोनों अलौकिक शक्तियाँ मानवता के कल्याण के लिए श्रव्य तथा दृष्य काव्य के रूप में प्रदान की है, जिसे वेद या श्रुति और सृष्टि के रूप में हम जानते हैं। वेद में वह सम्पूर्ण ज्ञान–विज्ञान है जो सृष्टि में परमात्मा ने मानव कल्याणार्थ प्रदान किया है। वेद के आधार पर हम सृष्टि के समग्र रहस्यों को सुलझाकर मानव जीवन को सुखमय बना सकते हैं। ईश्वर ने जैसा सृष्टि रचना किया है वह सब वेद के ज्ञान एवं विज्ञान के अनुकूल है। अतः आज वैज्ञानिक युग में वेदो को श्रेष्ठ एव प्राचीनतम् होने का गौरव प्राप्त है।

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता प्राचीन भारतीय साहित्य संस्कृत के साहित्य के महाकाव्य महाभारत का एक अंश है। जिसे लगभग एक शताब्दी से मान–सम्मान प्राप्त है। श्रीमती एनीवेसेंट ने गीता का एक अग्रेज़ी अनुवाद गुटके के रूप में प्रकाशित किया था। जिससे अंग्रेजी जानने वालों में इसका प्रचार–प्रसार हुआ लोगों ने पसन्द किया। उसी के पश्चात् लोकमान्य तिलक ने **'गीतारहस्य'** लिखकर राजनैतिक जगत का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। उसी समय महात्मा गाँधी ने गीता को अपनाकर अपने जीवन से जोड़ कर नया रूप दे दिया। वैसे महाभारत में कई गीताएँ है परन्तु इस गीता को अधिक महत्व प्राप्त हुआ। महाभारत की रचना आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व महर्षि व्यास ने की थी। जो आज बहुत बड़े ग्रंथ का रूप ले चुका है महाभारत के भाष्य कई संस्कृत वेत्ताओं ने किये है परन्तु गीता का भाष्य तो संस्कृत हिन्दी, अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में भी किया गया। भारत वर्ष के अनेक दार्शनिको ने भी गीता पर भाष्य करके अपने–अपने विचारों को सिद्ध करने का प्रयास किया। शंकराचार्य जी ने जहाँ अद्वैतवादी दार्शनिक सिद्धान्त को, रामानुज ने विशिष्टाद्वैत वादी दार्शनिक सिद्धान्त को और निम्बाचार्य ने अपने द्वैताद्वैतवादी दार्शनिक सिद्धान्त एवं अन्यों ने अनेक सिद्धान्तों को गीता से प्रतिपादित करने का प्रयास किया है। गीता उक्त विचारो की क्रीड़ा स्थली बन गई। गीता को हम दार्शनिक पहेलियों का समिश्रण कह सकते हैं। या यह कहें कि गीता एक दर्पण है जिसमें प्रत्येक दार्शनिक अपना ही चित्र देखता है। यह गुण है या अवगुण यह निर्णय आप विचारकों के बुद्धि विवेक पर है। परन्तु यह सत्य है कि गीता वैदिक धर्म की कसौटी पर वैदिक ग्रंथ सिद्ध नहीं होता।

वैदिक धर्म तर्क और विज्ञान की कसौटी पर मूल्यांकन करता है, जो इस कसौटी पर खरा है वही सत्य है। वैदिक धर्म ने संसार के साहित्य को तीन भागों में बाँट रखा है। 1–स्वतः प्रमाण 2–परतः प्रमाण 3–समस्त भारतीय एवं पाश्चात्य अन्य ग्रंथ।

उपर्युक्त कसौटी पर हम गीता का विश्लेषणात्म मीमांसा करते हैं कि गीता किस श्रेणी का ग्रंथ है।–

1.स्वतः प्रमाण –जिससे आप प्रत्यक्ष रूप में जीवन के आध्यात्मिक तत्वों का ज्ञान ग्रहण कर सकते हैं इस कोटि में वेद ही माने जाते हैं और वह भी केवल मंत्र संहिता अर्थात ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अर्थववेद।

2. परतः प्रमाण– इस कोटि में षट्‌दर्शन, उपनिषद, मनुस्मृति तथा ऋषि दयानन्द जी के ग्रंथ हैं। जो वेदानुकूल होने से मान्य हैं।

3. समस्त भारत एवं पाश्चात्यों के साहित्य– इस कोटि में बहुत से उत्कृष्ट कुछ साधारण और अनेक त्याज्य हैं।

प्रश्न यह है कि गीता इनमें से किस कोटि में है? मेरा विचार है कि गीता पहली दो कोटियों में से किसी में नही आती। न स्वतः प्रमाण है न परतः प्रमाण, इन दो कोटियों को अलग रख दिया जाय तो गीता साहित्य का उत्कृष्ट ग्रंथ कहा जा सकता है।

महर्षि दयानन्द जी महाराज ने सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास में गीता के एक मात्र श्लोक का उद्धरण दिया है। वह लिखते हैं–"जो जिससे उत्पन्न होता है वह कारण और जो उत्पन्न होता है वह कार्य और जो कारण को कार्य बनाने हारा है वह कर्त्ता कहाता है।"

नासतो विद्यते भावो ना भावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्व नयो स्वत्व देर्शिभिः।।
श्री मद्‌भगवद्‌गीता।। अ.2। श्लोक 17।

कभी असत् का भाव वर्तमान और सत् का अभाव अवर्तमान नहीं होता। इन दोनों का निर्णय तत्व दर्शी लोगो ने जाना है।"

परन्तु इसके अतिरिक्त उन्होंने अन्यत्र गीता का कोई उद्धरण अपने ग्रंथों में नहीं दिया। न ही गीता की अपनी रचनाओं में पठनीय माना। उक्त श्लोक भी वैशेषिक दर्शन पर आधारित है।

यहाँ हम देखते है कि गीता के सभी अध्यायों का मिलान किया जाये तो परस्पर विरोधी दृष्टि मिलेगी। वर्तमान गीता में अध्याय के अध्याय पुनरुक्त दिखलाई पड़ते है। ऊपर दार्शनिक विचारकों के परस्पर विरोधी विचार दिये गये हैं। गीता उपनिषदों के आधार पर खड़ी की गई है जब कि उपनिषदों का स्थान और महत्व गीता से बहुत ही अधिक है। गीता वादियो ने गीता को वेदों का सार तक कहने का दुःसाहस कर डाला है। जब कि गीता में वेद विरूद्ध बहुत से विचार बड़ी चालकी से समाहित किये गये है। यद्यपि गीता में **"वेदानां सामवेदोऽस्मि"** से वेद की प्रसंशा यदि मिलती है तो वहीं पर **"त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रेगुण्यो भवार्जुन"** तथा **"यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोद के । तावन सर्वेषुवेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः"** आदि श्लोको में वेद केवल त्रैगुण्य का वर्णन करते हैं– यह कहना सुतराम असंगत तथा मिथ्या है। वेद को यह निन्दा ही मानना होगा। वेद से ही अध्यात्म का ज्ञान भी निःसृत हुआ है इसका सर्वोत्तम भण्डार भी वेद ही है। वेद तो ज्ञान–विज्ञान का अगाध समुद्र है। उसके जाने बिना "विजानतः" पद का कोई महत्व नहीं रह जाता है, वेदों में वर्णित आत्मा, परमात्मा तथा जगत का दर्शन, उपनिषदों में आया जो गीता से पूर्व की रचनाएँ हैं वहीं से गीता में लेकर वर्णन किया गया। आत्मविद्या के भण्डार वेद है। "वेदवादरतः पार्थनान्यदस्तीति वादिनः श्लोक में भी वेद के प्रति अनादर की भावना मिलती है। वेद वस्तुतः केवल कर्मकाण्ड का वर्णन नहीं करते। उनमें अध्यात्म और दैवत ज्ञान एवं इस प्रकार के समस्त विद्याओं के वेद ही आदि स्रोत है। वेद के प्रति गीता की यह भावना ठीक नहीं है। वर्तमान में एक मत सा खड़ा हो गया है जो गीता के नाम पर वेद एवं शास्त्रों की अवहेलना कर रहा है। यह लोग गीता के अतिरिक्त किसी भी अन्य सद्ग्रंथों को महत्व नहीं देते। परन्तु यह बिल्कुल गलत मार्ग है। वेद, दर्शन तथा उपनिषदों के समक्ष गीता की तुलना ही अनुचित है। वेद को अपराविद्या कह कर गीता को पराविद्या का ग्रंथ बतलाते है। गीता में कोई भी ऐसी परा विद्या नही है जो उपनिषद् से न आई हो। उपनिषदें वेद से लेकर ही पर विद्या का वर्णन करती है। परा विद्या से तात्पर्य है कि जिससे अक्षर–ब्रह्म का ज्ञान होता है। यह ज्ञान भी वेद में वर्णित है। वेद से ही अक्षर का ज्ञान होता है। वेद में सर्वत्र 'ओऽम्' का वर्णन मिलता है फिर वेद अपराविद्या कैसे हो सकता है। वेद में परा तथा अपरा दोनों विद्या का वर्णन है। योगिराज श्री कृष्ण वेदज्ञ थे वे कभी भी वेद विरुद्ध बातें नही कह सकते। गीता का वेद विरुद्ध श्लोक तो भगवान श्री कृष्ण का अपमान करने वाले हैं।

गीता के प्रसिद्ध दो श्लोक जिसे श्रीकृष्ण माहराज ने रणक्षेत में अर्जुन को उपदेश दिया था–**न जायते म्रियते वा कदाचन।। तथा य एनं वेन्ति हंतारम् पश्चैनं मन्यते हतत्र** 10 यह कथन अवश्य ही रणक्षेत्र के ही योग्य हैं। क्योंकि वीर सिपाही को रणक्षेत्र में मृत्यु से नहीं डरना चाहिए क्योंकि जीव मरता नहीं। परन्तु सर्वसाधारण यदि इसे जीवन का अंग बना लें कि कौन किसको मारता है। जीव तो अजर अमर है। तो संसार में हत्या और हिंसा की सीमा न रहे। संसार को यह बताने की आवश्यकता है कि जीव मरता नहीं लेकिन पीड़ित और दुःखी तो होता ही है। हजारों कसाई प्रतिदिन करोड़ों पशुपक्षियों तथा जलचरों की हत्या करते हैं और कहते हैं कि कौन किसको मारता है? जीव तो अमर है। दो प्रवृतियाँ भिन्न–भिन्न है रण क्षेत्र की प्रवृति तथा सामान्य नागरिक जीवन की प्रवृति। इन दोनो प्रवृत्तियों को ठीक से समझना होगा। नही तो संसार में मानवता का बहुत अहित होगा। निष्कर्षतः गीता ईश्वर के अवतारवाद का पोषक है। श्री कृष्ण की महिमा एवं ईश्वरावतरण की स्थापना करना गीता का उद्देश्य है। गीता की किसी भी प्रकार तुलना वेद से नहीं की जा सकती। वैदिक संस्कृति के 'वेद' अमूल्य रत्न हैं, जो हमारे राष्ट्रीय मेरुदण्ड हैं। गीता में वह गुण नहीं जो राष्ट्रीय ग्रंथ बन सके।

मकान नं. 2475 निराला नगर, शिवपुरी सुलतानपुर, उत्तर प्रदेश

बिहार-चुनाव का सन्देश

● डॉ. ज्वलन्त शास्त्री

2014 ई. के लोकसभा के चुनाव के बाद भारतीय राजनीति की दशा और दिशा को एक जबर्दश्त मोड़ देने वाला बिहार -चुनाव का परिणाम आ गया है। ऐसा परिणाम अप्रत्याशित ही नहीं चुनौतीपूर्ण भी है। मैंने तो ऐसे परिणाम की कल्पना भी नहीं की थी। इस चुनाव से क्या सन्देश निकलते हैं?

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के लिए

यह एक कड़वी सच्चाई है कि R.S.S के प्रमुख श्री मोहन भागवत का आरक्षण सम्बन्धी बयान भाजपा की हार का प्रमुख कारक बना। यद्यपि रा. स्वयं सेवक संघ अपनी गलती नहीं मानेगा और भाजपा में एकाध को छोड़कर किसी में इस तथ्य को स्वीकार करने का साहस भी नहीं है। अत: संघ आगे से विशुद्ध राजनीतिक मसले पर कुछ न बोले इसी में उसका और भाजपा का भी भला है।

भाजपा के लिए

बिहार में और उत्तर प्रदेश में भी पिछड़े, अतिपिछड़े, दलित और महादलित वर्ग का कोई रसूखवाला नेता नहीं है। कल्याण सिंह और उमाभारती क्रमशः राज्यपाल और केन्द्रीय सरकार में हैं। इस वर्ग का नेतृत्व विकसित करने के लिए श्री मोदी जी और अमित शाह को प्रयास करना होगा और भाजपा के हितेच्छुकों को भी। नेतृत्व थोपने से नहीं होता उसके लिए उनके बीच रहने, उनके लिए संघर्ष करने और ईमानदार छवि का होने की जरूरत है। आखिर राजद, जदयू, सपा और बसपा के प्रति ही इन वर्गो का झुकाव क्यों होता है? इसकी गहराई में जाने की जरूरत है।

अनायकाः विनश्यन्ति, विनश्यन्ति बहुनायकाः।

अर्थात् नेतृत्वविहीन और बहुनायकों वाले संगठन का सफल होना मुश्किल है। बिहार में प्रान्तीय नेतृत्व में एकता नहीं थी और मुख्यमंत्री पद के अनेक दावेदार थे। इसके विपरीत राजद में नेतृत्व का संकट नहीं था और मुख्यमन्त्री पद हेतु नीतीश कुमार पर कोई विवाद भी नहीं था।

अन्य दलों के लिए

इस चुनाव का संदेश गैर भाजपाई दलों के लिए भी है। वह यह कि उनकी जीत का मतलब यह नहीं है कि वे जंगलराज या अराजकता की वापसी करें। जिस जंगलराज के लिए लालू प्रसाद जाने जाते हैं, यदि उसकी वापसी हुई तो **'पुनर्मूषको भव'** को भी वे नहीं रोक सकेंगे। कांग्रेस और इनके सहयोगी दलों से जनता की नाराजगी का कारण इनका बेलगाम भ्रष्टाचार है। भ्रष्टाचार पर नियन्त्रण और सुशासन के लिए भी नीतीश कुमार पर बिहारी जनता ने भरोसा जताया है और इस भरोसे को उन्हें बरकरार रखना होगा। गैरभाजपाई दलों के अन्य नेता भी श्री नीतीश की स्वच्छ छवि से प्रेरणा ले सकते हैं।

हिन्दुओं के लिए

हिन्दू समाज की राष्ट्रीय, राजनीतिक या जातीय चेतना कभी-कभी ही जागती है ज्यादातर सोई रहती है। इस बार भी सोई रही। हिन्दुओं का बहुसंख्यक वर्ग धार्मिक अन्धविश्वासों, निरर्थक कर्मकाण्डों, मूर्खतापूर्ण फलित ज्योतिषीय मान्यताओं तथा तान्त्रिक अभिचारों से आक्रान्त है। मुस्लिम समुदाय की राजनीतिक जागृति तथा विस्तारवादी नीतियों से कोई सीख नहीं लेता हिन्दू-समाज। डॉ.भगवान् दास कहते थे कि मुझे अपने देश में खोजने पर भी कोई हिन्दू नहीं मिलता, सबके सब अपनी जातीय पहचान ब्राहण, राजपूत, भूमिहार, कायस्थ, अग्रवाल, जायसवाल, अहीर, जाट, गूजर, बनिया, चमार, धोबी, मुशहर- सवर्ण- असवर्ण, अस्पृश्य ओर अन्त्यज के खाँचे में बँटे हुए हैं। हिन्दू अपनी इन मूर्खताओं और जाति की पहचान से कब मुक्त होंगे?

मोदी और शाह के लिए

इस चुनाव-परिणाम से प्रधानमंत्री श्री मोदी और भाजपा-अध्यक्ष श्री अमित शाह भी सीख ले सकते हैं। आक्रामक चुनाव प्रचार का भी खामियाजा उन्हें भुगतना पड़ा है। लोकसभा के 2014 के चुनाव में तो वक्त की माँग थी। परन्तु दिल्ली तथा बिहार में उसी आक्रामक प्रचार की आवृत्ति मँहगी पड़ी। उन्हें नीतीश या लालू को आरोपित किए बिना केवल विकास के लिए वोट माँगना चाहिए था। लोकसभा में नीतीश और लालू पराजित हो चुके थे, उन्हें पुनः पुनः आरोपी बनाए जाने से उनके जातीय-समूह अपमानित अनुभव करने लगे। आशा है, मोदी इससे नयी सीख लेंगे।

अपने समर्थकों और प्रशसकों को अपने से जोड़े रहना आत्मीय सम्बन्धों को और अधिक विकसित करना नायक का कर्त्तव्य होता है। जैसे अपने से हुई भूलों और गलतियों को स्वीकार कर उनको छोड़ देना चाहिए उसी प्रकार अपने मित्रों तथा हितेच्छुकों की छोटी-मोटी गलतियों को दर किनार कर अपने से जोड़े रखना चाहिए। इस सम्बन्ध में मोदी चूक रहे हैं। बाबा रामदेव, डॉ. वैदिक, रामजेठमलानी, चुनाव प्रबन्धक प्रशान्त किशोर आदि आज मोदी से दूरी क्यों ले रहे हैं? अरुण-शौरी, आर-के.सिंह, शत्रुध्न सिन्हा, यशवन्त सिन्हा इन लोगों से मोदी को मिलना चाहिए। इन्हें अपने से दूर और दूर कर देने से क्या मोदी का भला हो सकेगा? सामान्य जन-जीवन और ग्रामीण समस्याओं से भलीभाँति सुपरिचित राष्ट्रवादी अर्थशास्त्री श्री भरत झुनझुनवाला तथा राजनय तथा राष्ट्रवादी चरित्र के स्वामी सुब्रहमण्यम स्वामी की योग्यता से लाभ उठाने में मोदी को क्या दिक्कत है?

आर्य समाज के लिए

(1)मूर्त्तिपूजा और (2) जन्मना जातिवाद हिन्दू-समाज के सबसे बड़े ये दो अभिशाप हैं। जन्मना जातिवाद का सबसे बड़ा असर भारतीय राजनीति में पड़ता है। इसको कैसे समाप्त किया जाए? इस विषय पर सोचने वाला कोई कारगर संगठन नहीं है। स्वतन्त्रता से पूर्व 'जात-पात तोड़क मण्डल' लाहौर में कार्यरत था, आर्य समाज तब जीवित और जाग्रत संस्था थी।

डॉ. लोहिया और डॉ. आम्बेडकर का क्रान्तिकारी व्यक्तित्व था जो जातिवाद का विरोधी था। अब देश में राजनीतिक या गैर राजनीतिक कोई संस्था नहीं है जो जातिवाद के उन्मूलन में लगी हो। सैद्धान्तिक दृष्टि से आर्यसमाज जन्मना जातिवाद का विरोधी है, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से 5 प्रतिशत आर्य समाजी भी जन्मना जाति-पाँति को तोड़कर विवाह नहीं करते, तब जातिवाद का यह महारोग हिन्दुओं में कैसे रहेगा? राजनीतिक दल इसे राजनीतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं? कम से आर्य समाज और राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ इन दोनों संगठनों को इस विषय पर व्यापक समति बनानी होगी, इसके बिना हिन्दू-समाज की एकता कथमपि सम्भव नहीं है। मूर्तिपूजा के पाखण्ड से राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ तो मुक्त नहीं हो पाएगा, किन्तु जातिवाद के जहर से छुटकारा पाने हेतु आर्य समाज या इस प्रकार की किसी भी हिन्दूवादी संस्था से मिलकर उसको काम करने की जरूरत है। इस विषय में स्वामी अग्निवेश बहुत अच्छा नेतृत्व कर सकते थे, किन्तु उनकी राजनीतिक लोकैषणा ने उन्हें कहीं का न छोड़ा। राजनीतिक क्षेत्र को छोड़कर केवल सामाजिक क्षेत्र में काम करना और इसी आन्दोलन में अपने को खपाने का साहस करना सबके बूते की बात नहीं है। क्या आर्य-समाज के कर्णधार या आर्य विचारधारा के मनीषी और आर्य युवक इस चुनौती को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं?

सम्पर्कः 09415185521

आर्य समाज रामकृष्ण पुरम् में हुआ पुस्तक विमोचन एवं सम्मान समारोह

प्रो. डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया जी द्वारा हिन्दी में लिखित एवं श्री हरबंसलाल कोहली जी द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित पुस्तक "शून्य से शिखर तक स्वामी श्रद्धानन्द" नामक पुस्तक का विमोचन श्री आनन्द कुमार चौहान डायरेक्टर एमिटी शिक्षण संस्थान तथा ए.के. सी. ग्रुप ऑफ कम्पनी के कर कमलों द्वारा आर्य समाज रामकृष्णपुरम् सैक्टर-09, नई दिल्ली में हुआ। कार्यक्रम का प्रारम्भ प्रातः यज्ञ से हुआ और ओ३म् ध्वज श्रीमती संजना चौधरी जी ने ध्वज गीत के साथ फहराया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता श्रीमती मदुला चौहान जी द्वारा की गयी। भजन-संगीत में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल के बच्चों ने ओ३म् पर आधारित दो भजन प्रस्तुत किये तथा श्रीमती ऊषा चांदना जी ने मधुर संगीत से समा बांध दिया। इसके पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द जी (पलवल वाले), डॉ. महेश विद्यालंकार जी, प्रो सुन्दरलाल कथूरिया जी, आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री जी, डॉ अनिल आर्य, श्री अनिल शर्मा (पूर्व विधयक), श्री धर्म नारायण जी (धर्म प्रसार प्रमुख, विश्व हिन्दु परिषद), श्रीमती प्रकाश कथूरिया जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी की जीवनी पर अपने -अपने विचार रखें, साथ यह भी बताया कि यह पुस्तक अंग्रेजी में इसलिए प्रकाशित की गयी है, ताकि स्वामी जी की जीवनी तथा आर्य समाज की विचारधारा का प्रचार विदेशों में भी हो सके। इन प्रवचनों से पहले श्री सुभाष आर्य (महापौर दक्षिण दिल्ली नगर निगम) ने भी पधारकर आयोजन की शोभा बढ़ायी और आर्य समाज की विचारधारा का संदेश दिया।

इस अवसर पर श्री रामनाथ सहगल जी के अतिरिक्त 16 और महानुभावों का शाल तथा स्वामी श्रद्धानन्द जी के चित्र द्वारा सम्मानित किया गया।

स्वतन्त्र भारत का गौरव–राष्ट्रीय ध्वज व संस्कृति

● श्रीमती मनीषा विमल

छब्बीस जनवरी एवं पन्द्रह अगस्त हमारे देश के राष्ट्रीय पर्व हैं। पन्द्रह अगस्त सन् उन्नीस सौ सैंतालीस को देश अग्रेजों की गुलामी से स्वतन्त्र हुआ और छब्बीस जनवरी उन्नीस सौ पचास को पूर्ण स्वतन्त्र हुआ जब देश का अपना संविधान लागू हुआ, जिसके द्वारा संसार के सबसे बड़े लोकतन्त्र के रुप में जाना गया, अपने देश में अपना संविधान आरम्भ होने से देश "सार्वभौम सत्ता सम्पन्न लोकतान्त्रिक गणराज्य" बना, अर्थात् जनता की, जनता के लिये, जनता द्वारा चलाई गई शासन प्रणाली,

सर्व प्रथम हम नमन करते हैं महर्षि दयानन्द जी को जिन्होंने सन् अठारह सौ सत्तावन में स्वतन्त्रता का बीज बोया था–हिन्दुस्तान हिन्दुस्तातियों, शहीदों और देश भक्तों द्वारा दी गई कुर्बानियों द्वारा, हम नमन करते हैं उन गुमनाम शहीदो को जिनका नाम इतिहास के सुनहरे पृष्ठों में कहीं भी अंकित नहीं है किन्तु वह नींव के पत्थर हैं। इसीलिये किसी कवि ने कहा है–

"किस किस को याद करें हम, किस किस की कहें कहानी,
कितने ही पैदा हुए यहाँ पर अमर वीर बलिदानी।
तोपों बन्दूकों ने कर दी खत्म जवानी,
सभी सुखों को त्याग जिन्होंने धूल जगत ही छानी,,
देश किया आजाद उन्होंने करके अपनी हानी
देश भक्ति के कारण जिनको पड़ी विपत्ति उठानी,,
यद्यपि लंगड़ी मिली स्वतन्त्रता हमको, कैसे कहें कहानी,
हम करते हैं शत शत नमन उन वीरों को,
देश की आजादी है जिनकी अमर निशानी,,

यद्यपि देश का विभाजन बहुत बड़ी त्रादसी बनी और वह विभाजन दानव की भाँति देश में छा गया। बहुत सी कड़वी यादें आज भी मन में क्षोभ उत्पन्न कर देती हैं, फिर भी देश स्वतन्त्र हुआ और आज स्वअस्तित्व में विकाशशील बनने का प्रयास कर रहा है। हमारा तिरंगा झंडा 15 अगस्त 1947 को लाल किले पर फहरा दिया गया। स्वतन्त्र भारत का प्रतीक भारत का ध्वज।

किसी भी राष्ट्र का 'ध्वज' राष्ट्र के आदर्शों का, महत्वाकांक्षाओं का तथा भावनाओं का द्योतक होता है। यही किसी भी राष्ट्र की संस्कृति मातृभाषा एवं मातृभूमि के उत्थान का सोपान भी है। हमारा राष्ट्रीय 'ध्वज' भी ऐसा ही एक परम पवित्र प्रेरणा दायक प्रतीक है। सभी जानतें है कि भारत का राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा है, सबसे ऊपर केसरिया रगं है जो प्रतीक है "देश की शक्ति, साहस एवं दृढ़ संकल्प का, आध्यात्मिकता का,मध्य मे श्वेत रंग जो धन्य धान्य परिपूरित हरित धरती के विकास और उन्नति का परिचायक है, श्वेत रंग के बीच में नीले रंग का एक चक्र है जिसमें चौबीस तीलियाँ है जो सन्देश है दिन के चौबीस घंटों का, समय का तथा गति का, यह चक्र अशोक की लाट से लिया गया है। जब देश में आजादी की लहर चल रही थी उस समय सन् 1923 में कानपुर के श्री श्याम लाल गुप्त पार्षद" ने एक झंडा गीत लिखा था। जिससे जन जन के मन में उल्लास भर दिया था तथा झंडे के प्रति आस्था जगा दी थी, वह गीत था–

झंडा ऊचा रहे हमारा, विजयी विश्व तिरंगा प्यारा उस समय सबको संगठित करने के लिये देश के राष्ट्र नायकों को एक झंडे की आवश्यकता पर सहमति बनी। इसमें सर्व प्रथम मध्य में चरखा रखा गया था, किन्तु बाद में कांग्रेस ने अपना प्रतीक बना लिया। तब देश के राष्ट्रीय ध्वज के बीच में चक्र का प्रावधान किया। डा. राजेन्द्र प्रसाद जी की अध्यक्षता में एक समिति बनाई गई, जिसने 22जुलाई 1947 को झंडे के उस स्वरूप को मान्यता दी जो देश का गौरव, देश का प्रतीक ध्वज आज है। इसी को सर्वोत्कृष्ट रूप में स्वीकार किया गया।

किसी भी देश का राष्ट्रीय ध्वज उस देश की प्राण शक्ति होता है। विश्व में उस राष्ट्र की पहचान राष्ट्रीय ध्वज से ही होती है। ओलम्पिक में जब खिलाड़ी परेड में निकलते हैं तब अपने अपने देश का ध्वज लेकर चलते हैं। इसी से उस राष्ट्र की पहचान होती है।

भारतीय ध्वज की विशेषता है तिरंगा होना। जो सत्य अहिंसा व दृढ़ सकंल्प की शक्ति से अभिमन्त्रित है। सर्वप्रथम महात्मा गाँधी ने इसे हाथ से बुने खद्दर के कपड़े से बनाने का विधान किया था। इसकी लम्बाई चौड़ाई बराबर नहीं रखी गई है। विशाल जन समूह के सामने 15 अगस्त को प्रत्येक वर्ष लाल किले पर प्रधान मन्त्री द्वारा, झंडा फहराया जाता है तथा 26 जनवरी को जनपथ पर राष्ट्रपति द्वारा फहराया जाता है। सभी अपने अपने कार्यालयों तथा विद्यालयों में फहरा कर झंडे का अभिवादन करते हैं। अर्थात् समस्त नागरिकों को सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना का अधिकार प्राप्त है। साथ ही राष्ट्र भक्ति की प्रेरणा भी देता है।

भारतीय ध्वज की विशेषता है तिरंगा होना। जो सत्य अहिंसा व दृढ़ सकंल्प की शक्ति से अभिमन्त्रित है। सर्वप्रथम महात्मा गाँधी ने इसे हाथ से बुने खद्दर के कपड़े से बनाने का विधान किया था। इसकी लम्बाई चौड़ाई बराबर नहीं रखी गई है। विशाल जन समूह के सामने 15 अगस्त को प्रत्येक वर्ष लाल किले पर प्रधान मन्त्री द्वारा, झंडा फहराया जाता है तथा 26 जनवरी को जनपथ पर राष्ट्रपति द्वारा फहराया जाता है। सभी अपने अपने कार्यालयों तथा विद्यालयों में फहरा कर झंडे का अभिवादन करते हैं। अर्थात् समस्त नागरिकों को सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना का अधिकार प्राप्त है। साथ ही राष्ट्र भक्ति की प्रेरणा भी देता है।

वेद में एक मन्त्र आता है–

तिस्त्रो देवी र्वाहरेन्दं सन्त्विडा सरस्वती भारती मही गृणाना यर्जु.26–19

तीनदेवियाँइडा–मातृभाषा,सरस्वती–संस्कृति तथा महीगृाना–मातृभूमी–इद्मवीर्ह–राष्ट्र में, आ सदन्तु–विराजती रहे।

राष्ट्रीय ध्वज के साथ साथ किसी राष्ट्र की पहचान उसकी संस्कृति उसकी भाषा तथा मातृभूमि से होती है, हमें स्वतन्त्रता तो मिली किन्तु जाते–जाते अंग्रेज हमारी मातृभाषा हिन्दी को 'हिंग्लिश' बना गये।

आज 66 वर्ष बाद भी अधिकतर विद्यालयों कार्यालयों में अग्रेजी भाषा का ही आधिपत्य है। बड़े बड़े शिक्षा क्षेत्रों में जैसे चिकित्सीय क्षेत्र, इन्जीनियरिंग, औद्योगिक, सस्थानों की सारी पढ़ाई का माध्यम आज भी अंग्रेजी भाषा ही है। अभी तक इन विषयों की पुस्तकों का हिन्दी भाषा में अनुवाद नहीं हो सका है। कहा जाता है देश में इतनी भाषाएँ हैं एक भाषा का प्रयोग सम्भव नहीं, जबकि सत्यता यह है बड़े–बड़े राष्ट्रनेता अपना वर्चस्व रखने के लिए इस विषय में कदम बढ़ाना नहीं चाहते। वह स्वयं भी अपने भाषण अपने ही देश में अंग्रेजी में देना चाहते हैं और देते ही है। हाँ इस क्षेत्र में आदरणीय मोदी जी (प्रधानमन्त्री) ने पहल की है वह साधुवाद के पात्र हैं। वह प्रत्येक देश में अपना भाषण हिन्दी में ही देते हैं।

जाते जाते अग्रेजों ने हमारी संस्कृति को भी घुन लगा दिया। आज वही दीमक हमारी संस्कृति को समाप्त कर रही है और पश्चिमी रंग में रंगती जा रही है, रहन–सहन, बोल–चाल, खान–पान सभी में विदेशीपन बढ़ता जा रहा है।

मातृभूमि का अस्तित्व भी अब खतरों से धिरता जा रहा है। यहाँ की शस्य श्यामला भूमि बड़े बड़े कंकरीट के जंगलो में फैलती जा रही है, उँची उँची इमारतें चारों तरफ बन रही हैं, सयुंक्त परिवार प्रथा, आपसी सहयोग, बुजुर्गों का सम्मान नष्टप्रायः होता जा रहा है।

यद्यपि स्वतन्त्रता के पैंसठ वर्षों में स्वतन्त्र भारत में विकास भी हुआ है, हम आर्थिक रुप से समृद्ध भी हुए हैं किन्तु कहीं न कहीं हमारी मान्यताएँ, हमारे सिद्धान्त खो से गये हैं। धन के लालच ने सबको अन्धा कर दिया है। जिस मातृभूमि को सुन्दर स्वास्थ्यप्रद, उपजाऊ होना चाहिए था। आज पर्यावरण प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। क्योंकि चारों तरफ ऊँची ऊँची चिमनियों से उठता धुआँ परिवहन उपकरणों का अत्याधिक होना, वृक्षों का काटे जाना सभी का मिश्रित प्रभाव वातावरण को दूषित कर रहा है।

किसी देश की स्वतन्त्रता का अर्थ होता है उस राष्ट्र का आर्थिक, सामाजिक व शैक्षिक विकास, जिससे राष्ट्र स्वायत्त सम्पन्न बन सके। शायद हमारे राष्ट्रनायकों ने स्वतन्त्र भारत का यही स्वप्न देखा होगा। अग्रेंजी राज्य में हुई गलतियों को दूर करके अपना हाथ जगन्नाथ की भावना को संजोया होगा। किन्तु कहीं अनजाने ही हमारी स्वतन्त्रता स्वच्छंदता में बदल रही है। युवा वर्ग भटक रहा है। ऐशो–आराम व रातों रात अमीर बनने का लालच उन्हें अपराधिक दलदल में फँसाता जा रहा है। वह पथ भ्रष्ट हो रहे हैं। शायद ऐसा कोई महानायक आकर युवा वर्ग को सही दिशा दिखा सके उनकी प्रतिभा का सही उपयोग कर सके। तभी देश पुनः सोने की चिड़िया बन सकेगा। हमारे देश में बहुमूल्य प्रतिभाएँ विखरी पड़ी हैं। आवश्यकता है उन्हें बटोरने की, उनको उचित राह दिखाने की। हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हमारे राष्ट्र नायक कर्मठ चरित्रवान तथा प्रतिभा सम्पन्न हों। जिससे पुनः भारत राष्ट्र गुरु बन सके तथा सही अर्थों में एक प्रतिभा सम्पन्न गणतन्त्र बन सके।

इसका नैतिक दायित्व भी जनता पर ही है कि जिन्हें अपना प्रतिनिधि सोच समझ कर ही चुनना चाहिये। जो जातीयता, प्रान्तीयता या आर्थिकता के दायरे से भ्रमित न करें। इस आधार पर वोट देकर प्रतिनिधि चुनने से चरित्रवान व्यक्ति सत्ता में नहीं आते। देश के ध्वज का गौरव बढाने के लिये तथा संस्कृति को पुनः प्राप्त करने के लिये जनता की नैतिकता के साथ–साथ आवश्यकता है एक सुहढ़ व समर्पित सरकार की।

2/25 आर्य वान प्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर–हरिद्वार
9760618162

पत्र/कविता

कृष्ण युद्ध-लिप्सु कहे जाएँ, यह आश्चर्य है

प्रायः जनता भगवान् कृष्ण को भारत युद्ध के लिए उत्तरदायी मानती है। अनुत्तरदायी लोग तो उन्हें युद्ध लिप्सु कहने तक से पीछे नहीं हटते। किन्तु बात ऐसी नहीं है कृष्ण युद्ध के परम विरोधी थे। जब युद्ध में शामिल होने का न्यौता देने उभय पक्ष के दो व्यक्ति–अर्जुन और दुर्योधन द्वारिका में उनसे मिले तो उन्होंने स्पष्ट कहा– दोनों पक्ष मेरे लिए बराबर हैं। मैं न तो लडूँगा और उभय को समान समझता रहूँगा। युद्ध करने की बात ही क्या मैं तो हथियार भी हाथ में नहीं लूँगा। वही कृष्ण युद्ध लिप्सु कहे जाएँ, यह आश्चर्य है।

जब कृष्ण ने समझ लिया कि दोनों पक्ष लड़ने पर उतारू हैं तो उन्होंने स्वयं को तटस्थ बनाया तथापि पांडवों से कह दिया कि मैं युद्ध को अच्छा नही समझता। व्यक्तिगत मानापमान की चिन्ता न कर, शान्ति दूत बन कर मैं स्वयं हस्तिनापुर जाऊँगा और राजसभा में अपील करूँगा कि युद्ध जो विनाशकारी है कदापि न होगा। यद्यपि पाडवों ने उन्हें शांति का संदेश लेकर जाने के लिए इस आधार पर रोका कि मात्र अपमान, उन्हें कुछ नहीं मिलने वाला है। अपनी बात पर अटल कृष्ण हस्तिनापुर पहुँचे, दुर्योधन को जब समाचार मिला तो वह राजदूत होने के कारण कृष्ण की अगवानी के लिए आगे भी आये तथा भोजन का आग्रह भी किया। किन्तु कृष्ण ने कहा कि साथ भोजन दो स्थितियों में किया जाता है– जहाँ परस्पर प्रीति होती हो या जब आपतकाल में भोजन करना ही पड़े। आपके हमारे बीच न तो प्रेमभाव है और मैं न ही विपत्ति ग्रस्त हूँ। अन्ततः कृष्ण ने महामंत्री विदुर के यहाँ आतिथ्य लिया। राज सभा में उपस्थित हुए और राजा घृतराष्ट्र को विस्तार से युद्ध की हानियां समझाई। किन्तु दुर्योधन के दुराग्रह के आगे अंधे राजा की कुछ भी नहीं चली। कृष्ण ने यहाँ तक कह दिया कि आम जन की भलाई के लिए मैं तो यही कहूँगा कि राजा को चाहिए कि वह हानि करने वाले दुर्योधन को कारागार में बंद करे किन्तु युद्ध को अवश्य रोके। किन्तु नतीजा वही ढाक के तीन पात। कृष्ण का शान्ति मिशन फेल तो हुआ किन्तु लोगों ने जान लिया यतो धर्मस्ततो जयः

दो वही श्रद्धा हमें भी

धर्मवीर शास्त्री

दो वही श्रद्धा हमें भी दो अनोखी शान अपनी।
सिंह–गर्जन से तुम्हारी ही कभी नभ गूंजता था
वीरता ऐसी कि बैरी पग तुम्हारे पूजता था
छा गये थे तुम चतुर्दिक वेद का गौरव सुनाते
तर्जनाओं में तराने जीत के ही गुनगुनाते
तुम वही जो प्राण–पण से थे निभाते आन अपनी।
प्राप्त कीं लघु साधनों से सिद्धियाँ तुमने अनूठी
क्या टिकी सम्मुख तुम्हारे दम्भ की दीवार झूठी
गुरुकुलों को जन्म यत्नों से तुम्हारे ही मिला था
धर्म का सर्वत्र शीतल चाँदना तुमसे खिला था
लोकहित में सम्पदा तुम कर चुके थे दान अपनी।
खून से अपने लिखा था क्रान्ति का इतिहास तुमने
भर दिया था जाति में नव आत्म–बल विश्वास तुमने
दाम्भिकों से युद्ध में तुम इस सदी के सव्यसाची
या तुम्हारा नाम साहस–शूरता–पर्यायवाची
आपदाओं में न खोते थे कभी मुस्कान अपनी।
कार्य में प्राचीन शिक्षादर्श को परिणत किया था
वेद, संस्कृत और संस्कृति को पुनः उन्नत किया था
शुद्धि का दे मन्त्र अरि–मुख कर दिया था बन्द तुमने
दीं झुका संगीन छाती खोल श्रद्धानन्द तुमने
धर्म के हित अन्ततः दे ही गये तुम जान अपनी।
सत्य श्रद्धा के सबब ही दीप्त यज्ञिय याग थे तुम
हो गये उसमें सुहुत यों मूर्त्त जीवन–याग थे तुम
नाम के अगणित मिलेंगे काम के बस एक थे तुम
सत्य के पथ में समर्पण के अमर उल्लेख थे तुम
कुछ अलग ही छोड़ जग में तुम गये पहचान अपनी।
देख दुनियां ने लिया संगीन से उद्धत छुरा है
साम्प्रदायिक विष सियासत के जहर से सौ बुरा है
आज के हालात स्वामिन्! और भी उलझे हुए हैं
है नहीं व्यक्तित्व तुम–सा सर्वतः गहरे कुएँ हैं
दो हमें साहस विपद् लें झेल छाती तान अपनी।

बी 1/51 पश्चिम विहार,
नई दिल्ली–63

डा. भवानीलाल भारतीय
3/5 शंकर कालोनी, श्री गंगानगर
0154–2466299

वेद के अनुसार पूर्णज्ञान व पूर्णदण्ड का अनुष्ठान, सब समास्याओं का समाधान है

ईशोवाच–।। ओइम् धियो यो नः।। यत्र ब्रह्मच क्षत्रञ्च।।

मात्र साधनों की आपूर्ति, सन्तानों एवं राष्ट्र को नहीं बनाती। माता–पिता तथा राष्ट्र के प्रति सेवा व श्रद्धा हेतु चाहिए, मानवीय संस्कार व कठोर अनुशासन। ज्ञान विज्ञान के इस युग में विभिन्न प्रकार के साधनों से अपनी सन्तानों को तृप्त करने वाले माता–पिता तब अत्यन्त दुःखी व निराश होते हैं जब उनके दिन–रात प्यार व सुविधाओं को पाकर भी उनकी सन्तानें उनकी ही नहीं बनती। थोड़ी सी ही खाने–पीने चलने एवं नौ–दस कक्षाओं की बुद्धि आ जाने पर अधिकतर माता–पिता का मान–सन्मान उनके लिए कोई मूल्य नहीं रखता। उन्हें माता की अपेक्षा पड़ोस की आण्टी जी अधिक अच्छी लगती है। क्योंकि जिस परिवार अथवा प्रान्त के जनों को साधनों के साथ–साथ अच्छा इन्सान बनाने का पूर्ण ज्ञान व अनुशासन भंग या दुष्कर्म व मनमानी करने पर दण्ड नहीं मिलता उनको देश–धर्म–मानवता भक्त बनाना असम्भव है। वेद के शब्दों में 'यत्र ब्रह्म व क्षत्रं च' अर्थात पूर्ण ज्ञान व पूर्ण दण्ड ही ऐसे दो पुण्य साधन है जो परिवार व प्रान्त को स्वर्ग बनाते हैं। ऐसी ही स्थिति लगभग आज के राष्ट्रनायकों की भी है। प्रचुर मात्रा में मुफ्त–मुफ्त जैसे बिजली व पानी को पाकर भी अपने नहीं राष्ट्रविरोधी आतंकियों के आधार स्तम्भ पाकिस्तान से अधिक प्यार करते हैं। जिस देश ने उन्हें जीवन का आधार दिया, जीने की व मजहब की और प्रान्तों से अधिक आ. जादी दी उसके मुर्दाबाद करना, उसके ध्वज को फाड़कर उतारना, फिर जलाना, इतने से भी सन्तोष न होने पर उस पर पेशाब करते हुए कहना हिन्दुस्तान मुर्दाबाद! भूखा नंगा हिन्दुस्तान! जीये–जीये पाकिस्तान। हिन्दुस्. तानी कुत्तो कश्मीर छोड़ो।

भारत माँ के वे बच्चे सपूत जो हथेली पर जान लेकर देश की सीमाओं की रक्षा व भुखमरी, बाढ़–भूकम्प या दंगे छिड़ जाने पर राष्ट्र की रक्षा करते हैं। उन्हें प्रतिदिन गालियाँ देकर कश्मीर छोड़ने के नारे लगाना। पिछले लगभग 62 वर्षों से भारतवासियों का खून निचोड़कर मुफ्त राशन खाने वाले कश्मीर में किसी एक आद स्थान को छोड़कर कहीं राष्ट्रध्वज नहीं मिलता। वे 15 अगस्त के स्थान पर पाकिस्तानी चाँद तारे का झण्डा फहराते हैं। प्रतिदिन दंगे एवं सरकारी सम्पदा को आग लगाई जाती है। प्रतिदिन नौजवान सैनिकों को गोलियां मारी जाती हैं। जबकि मुफ्त जैसे राशन के साथ–साथ मदरसों व स्कूलों में इस्लामी कुरान के अनुसार पश्चिम की ओर मुँह करके प्रार्थना होती है। हज यात्राओं हेतु अरबों रुपयों की सहायता दी जाती है। यदि कोई दिल्ली, मुम्बई, पंजाब या हरियाणा से वहां जाता है और टेक्सी को मीटर पर चलाने की बात करता है तो कश्मीरी मुसलमान कहते हैं ''लगता है आप हिदुस्तान (इंडिया) से आए हैं।'' यह भारत नहीं आजाद कश्मीर है। चलना है तो बिना बिना चलो नहीं तो खड़े रहो। मैं विक्रमी 2014 तक प्रतिवर्ष जाता रहा और कारगिल के समय भी गया था। किसी भी धनाड्य हिन्दू को कोठी से बाहर निकालकर कहा जाता है या तो 10 लाख दो नहीं तो गोली खाने हेतु तैयार रहो। जीने का हिन्दू टैक्स जिसे कुरान की भाषा में 'जजिया' कहा जाता है। हमारे दूसरे एक आर्य नौजवान को कहने लगे शान्ति से रहना चाहते हो तो मुसलमान बन जाओ। चरारे शरीफ की सहायता से कभी सिकन्दर बुतशिकन व उसके मन्त्री मो. सोहा ने हिन्दुओं को इतना लूटा, पीटा व अपमानित किया था कि वे शान्ति से मरने हेतु स्वयं ही दरिया में छलांगें लगाकर आत्महत्या करने लगे थे। परन्तु आज कश्मीर पर मुगलों का नहीं अपने देश के नेताओं का राज है फिर भी ऐसी स्थिति, तथा हर मुसलमान के दिल में हिन्दुओं के प्रति इतनी घृणा क्यों और वह भी इतनी सुविधाएँ पाकर? गत दिनों हमारे परिचित आर्य परिवार की करोड़ों की सम्पदा आग लगाकर राख हुई। जिस व्यक्ति को सच्चा मानवता का ज्ञान न मिले व दुष्कर्म करने पर दण्ड न मिले वह पुण्यात्मा नहीं पापी ही बनता है।

आचार्य आर्य नरेश
उद्गीथ, साधना स्थली,
हिमाचल प्रदेश

स्वामी श्रद्धानन्द श्रद्धा की मूर्ति

● डॉ.बिजेन्द्र पाल सिंह

स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती का जन्म ग्राम तलवन जिला जालन्धर में सम्वत 1993 को त्रयोदशी के न फाल्गुन में हुआ था। इनके पिता लाला नक चन्द्र पुलिस में अधिकारी थे। स्वामी ी के बाल्यकाल का नाम मुन्शीराम था।

मुन्शी राम का विद्याध्ययन काल एक मान नहीं रहा। इनको अनेक समय में अनेक ौक रहे कभी पढ़ाई की धुन, कभी कविताएं लेखने की धुन, कभी उपन्यास लिखने की धुन आवारगी व मद्यपान में भी कमी नहीं छोड़ी। बनारस के क्वींस कालेज से ऐंट्रेन्स रीक्षा पास कर, फिल्लौर में वकालत की। वेद्यार्थी जीवन में बरेली बनारस इलाहाबाद रह कर पूरी मौज मस्ती की।

एक बार इनका एक मित्र किसी अबला का सतीत्व भंग करना चाह रहा था। हालाकि ये व इनका मित्र शराब के नशे में थे इनसे किसी स्त्री के साथ यह अत्याचार देखा नहीं गया। मित्र को जोर का धक्का मारा वह दूर जा गिरा। यहाँ से इनके विचारों मे परिवर्तन आना शुरु हो गया। तत् पश्चात लाहौर आर्य समाज के तत्–कालीन प्रधान लाला साईदास के व पं. गुरूदत्त के व्याख्यानों से मुंशी राम के विचारों में परिवर्तन आने लगा। दुर्व्यसन छोड़ दिए, मदिरा मांस हुक्का पान व अन्य व्यसन छूटने लगे सात्विक भोजन करने लगे। बरेली में ऋषि दयानन्द का ओजस्वी भाषण सुना तत्–पश्चात आप पूरी तरह से बदल चुके थे और सन् 1885 में आर्य समाज में प्रवेश किया। इसके बाद धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक जीवन में ऐसे आए कि आँधी और तूफान की भाँति पूर्ण ब्रहमचारी की भाँति देवता स्वरूप बन कार्य किए 1885 से 1926 तक दुनियां को बदलने हेतु जान की बाजी लगा दी। 41 वर्षों में स्वामी जी ने वह कार्य किए कि गिनाए नहीं जा सकते। सन् 1891 में स्वामी जी की धर्म पत्नी का निधन हो गया परन्तु इन्होंने दूसरा विवाह नहीं किया। बच्चों के पालन पोषण की समस्या आ गई। सार्वजनिक व सामाजिक कार्य करते रहे। वकालत भी करते रहे। 1982 में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान बनाए गए। आर्य समाज के कार्यों का बहुत बड़ा भार था। डी. ए. वी. कालेज लाहौर की स्थापना हुई। पं. गुरुदत्त के आप बड़े भक्त थे। 1890 में पं. गुरुदत्त जी की अकाल मृत्यु हो गई। 1896 में पं. लेखराम का एक मुसलमान के द्वारा वध हो गया। मुंशी राम व पं. लेख राम में बहुत प्रेम था। पं. लेखराम का अन्तिम संदेश यही था कि "लेख न का कार्य बन्द न होने पावे"।

यही नहीं स्वामी जी ने लेखन कार्य किए और करते रहे। व्याख्यान भी दिए तथा शास्त्रार्थ भी किए। पं. गोपीनाथ के साथ 1898 में अनेक शास्त्रार्थ हुए थे। जालन्धर में कन्याओं हेतु महाविद्यालय की स्थापना की। मार्च 1902 में 30 ब्रह्मचारियों को लेकर नील गिरि व नीलधारा के मध्य गुरुकुल खोल दिया। अपने दो पुत्रों को भी उसमें भर्ती किया।

मार्शल ला के शासन से पजाब की जनता पीड़ित थी। वहाँ पं. मदनमोहन मालवीय, पं. मोतीलाल नेहरु के साथ स्वामी श्रद्धानन्द भी वहाँ गए थे। 1921 में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। स्वामी जी ने उसमें पूरा सहयोग दिया। सत्याग्रह आन्दोलन में महात्मा गाँधी के साथ भी रहे। स्वामी जी आजादी की लड़ाई में सार्वदेशिक अहिंसा के पक्षपाती नहीं थे। आपने अछूतोंद्धार व दलितोद्धार के लिए एक सभा का गठन किया। मेघ जाति के अछूतो को गुरुकुल में प्रवेश दिलाया। 24 मार्च 1926 को असगरी बेगम की मुसलमान महिला अपने दो पुत्र व एक भतीजे को ले कर स्वामी जी के पास आई और शुद्धि हेतु निवेदन किया उनका शुद्धि करण कर दिया असगरी बेगम का नाम शान्ति देवी रखा। दोनो पुत्रो का नाम धर्म पाल व अर्जुन एवं भतीजे का अमर सिंह रख कर शान्ति देवी को वनिता आश्रम भेज दिया।

इस शुद्धि–करण के पश्चात् 23 दिसम्बर को एक मतान्ध मुसलमान रशीद ने स्वामी श्रद्धानन्द से मिलने के बहाने आ कर उन पर गोली चला दी। हालांकि स्वामी जी के प्राइवेट सेक्रेटरी धर्मपाल ने उस हत्यारे को पकड़ लिया था परन्तु एक महान क्रान्तिकारी जुझारु, समाज का नेत्रत्व करने वाले, शुद्धि कार्य के योद्धा विद्वान, वेद की दुन्दुभि को क्रियान्वित करने वाले महान कार्यकर्त्ता को खो दिया। एक मुसलमान डा. अन्सारी ने स्वामी जी के प्राणों की रक्षा की दूसरे ने प्राण ले लिए।

धर्म के लिए स्वामी श्रद्धानन्द ने अपना बलिदान कर दिया। समाज की उन्नति व देश सेवा के लिए वे एक मिशाल थे। देश ने एक धुरन्धर नेता खो दिया।

चन्द्रलोक कालोनी, खुर्जा

आर्य समाज की उन्नति कैसे हो?

● अश्विनी कुमार पाठक

महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना 1975 ईसवी को सर्वप्रथम मुम्बई महानगर में एक क्रांतिकारी आन्दोलन के रूप में की थी। इसके बाद देश के अन्य नगरों में भी इसकी स्थापना हो गई। अल्पकाल में ही इस संगठन की स्थापना भारत के सभी प्रदेशों तथा विदेश में इग्लैंड, अमरीका, कैनेडा, केन्या, मारीशस, म्यांमार तथा अफ्रीका इत्यादि में भी हो गई। इस तरह लाखों व्यक्ति आर्य समाज के सदस्य बने है। महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज के जो दस नियम बनाये थे वे वास्तव में मानव निर्माण के 10 साधन हैं। छठे नियम के अनुसार आर्य समाज का मुख्य लक्ष्य संसार का उपकार करना है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। देश के सब प्रदेशों में आर्य प्रतिनिधि समाएं हैं जो अपने अपने प्रदेश में सभी समाजो को नियंत्रण में रखती हैं तथा वेद प्रचार में सहयोग देती हैं। आर्य समाज का मुख्य धर्मग्रंथ वेद है जिसका ज्ञान आदि सृष्टि में ईश्वर ने चार ऋषियों द्वारा दिया था जो सब मनुष्यों के लिए उपयोगी है। वेद के अनुसार ही हमारे अन्य धर्म ग्रन्थ उपनिषद्, रामायण, महाभारत इत्यादि हैं। आर्यसमाज की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा है जिसका कार्यालय नई दिल्ली में रामलीला मैदान के निकट है। शिक्षा के प्रचार के लिये अनेक स्कूल, कॉलेज, गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय तथा डी.ए.वी. विश्वविद्यालय है। इनके अतिरिक्त युवकों के संगठन आर्य वीरदल तथा केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् इत्यादि हैं। वेद की शिक्षाओ को साधारण जनता तक पहुचाने के लिए महर्षि दयानन्द द्वारा रचित ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश है। उन्होंने वेदों का संस्कृत तथा हिन्दी में भाष्य भी करना प्रारम्भ किया था परन्तु धर्म विरोधी लोगों ने उनको कई बार विष देकर मारने के यत्न किये और विष के कारण ही उनका 59 वर्ष की आयु में ही बलिदान हो गया इसलिये वह चारों वेदों का भाष्य पूरा नहीं कर सके।

उनके बाद अनेक आर्य विद्वानों ने वेद का प्रचार जारी रखा जिससे आर्य समाज की बड़ी उन्नति हुई और इसने देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लिया तथा समाज सुधार के कार्य किये। परन्तु अब कुछ समय से आर्य समाज का वेद प्रचार का कार्य ढीला पड़ गया है। इसलिये साप्ताहिक सत्संगों में हाजिरी कम होती जा रही है। अधिकाश परिवार भी आर्य समाजी नहीं हैं। महर्षि दयानन्द ने सब आर्यो के लिये निर्देश दिया था अपना धर्म वैदिक और जाति आर्य लिखायें परन्तु इस ओर नेताओं ने विशेष ध्यान नहीं दिया। अब नये सदस्य बन नहीं रहे और पुराने दिवंगत हो रहे हैं। इस तरह आर्य समाज कब तक चलेगा?

आर्य समाज केवल हवन यज्ञों तक ही सीमित हो रही है। वेद प्रचार से विद्वान डर रहे हैं और पाखंड खंडन नहीं कर रहे ताकि लोग नाराज न हो जायें। इस समय आर्य समाज का कोई सर्व मान्य नेता ही नहीं है। छोटे–2 नेता स्वार्थ और पदों के लालची बन कर आपस में ही मुक़द्मे बाजी कर रहे हैं। इसलिये किसी नेता अथवा विद्वान् को आगे आकर चुनाव सम्बन्धी झगड़े समाप्त कराने चाहियें तभी संगठन को बचाया जा सकता है। आर्य समाजों को सक्रिय होकर निम्न कार्यक्रम बनाना चाहिये।

1. कुछ आर्य समाजों में दैनिक सत्संग होता है। आर्य समाज को जब मन्दिर का रूप दिया गया है तो प्रत्येक आर्य समाज में प्रातः सायं सन्ध्या सत्संग दोनों समय हो। हवन छोटे रूप में एक ही बार कर सकते हैं।
2. आर्य समाजों को महीने में एक बार आर्य समाज मन्दिर से बाहर किसी कॉलोनी में सत्संग करना चाहिये तभी जनता आर्य समाज से जुड़ेगी।
3. आर्य समाजों में सब त्योहार तथा वार्षिकउत्सव अवश्य मनाये जायें।
4. सब आर्यजन अपना धर्म वैदिक ही लिखे लिखायें।
5. आर्य समाज परोपकार तथा समाज सुधार के कार्य अर्थात् कम खर्च पर विवाह तथा महिलाओं का सम्मान बढ़ाने, कन्या भ्रूण हत्या रोकने का प्रचार करती रहें। प्राकृतिक आपदाओं अकाल, भूचाल इत्यादि से पीड़ितों की सहायता करना, भ्रष्टाचार तथा महिलाओं से बलात्कार का विरोध।
6. आर्यसमाज के साप्ताहिक संग के बाद ऋषि लंगर चलाने की व्यवस्था की जाये जबकि गुरुद्वारों में तो प्रतिदिन लंगर चलते हैं। धन की कमी नहीं होगी।
7. सब सदस्यों को परिवार सहित सत्संग में भाग लेना चाहिये। जो दैनिक सत्संग में न जा सकें उन्हें अपने–अपने घरों में हवन कभी अवश्य कराना चाहिये और सन्ध्या तो दोनों समय करनी चाहिये।

उपरोक्त सुझावों पर अमल करने से ही आर्य समाज जीवित रहेगा और वेद का प्रचार करता रहेगा।

सब आर्यजन ये चार पक्तियाँ हमेशा याद रखें

आर्य हमारा नाम है वैदिक हमारा धर्म।
ओम हमारा ईश है यज्ञ योग हमारा कर्म।
सत्य, अहिंसा हमारे लक्ष्य हैं गायत्री महामन्त्र।
भारत हमारा देश है सदा रहे स्वतंत्र।

सी–233 नानक पुरा,
नई दिल्ली–21

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 16-17 \12 \2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39 \57

आर्य अनाथालय ने मनाया 138 वाँ स्थापना दिवस

आर्य अनाथालय के प्रांगण में 138 वां स्थापना दिवस धूम-धाम से मनाया गया। डॉ. सतनाम कौर ने आये हुए जन समूह को सम्बोधित करते हुए कहा कि महार्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा स्थापित आर्य अनाथालय 138 वर्षो से अब तक हजारों अनाथ, असाहय एवं जरूरतमंद बच्चों का भविष्य संवार कर राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ चुका है। बहुत से बालक-बालिकाऐं उच्च पदों पर पहुँच कर अपना परिवारिक जीवन बहुत ही खुशहाली पूर्वक व्यतीत कर रहे हैं। कुछ होनहार बच्चे कुशल व्यापारी, शिक्षक सरकारी अधिकारी, नर्सिंग, सेना, अर्द्ध सेना आदि क्षेत्रों में नाम कमा रहे हैं। वर्तमान में 130 बच्चों को पूर्णतः निःशुल्क भोजन वस्त्र, आवास, शिक्षा, औषधि, नैतिकता खेलकूद एवं जीवन निर्माण के साधान प्रदान करके यह संस्था इन्हें उज्ज्वल भविष्य की ओर आगे बढ़ा रही है।

स्थापना दिवस के शुभ अवसर पर श्रीमती एवं श्री पं. सतीश शर्मा एडवोकेट, श्रीमती एवं श्री नारंग जी मुख्य यजमान, डी. ए. वी. स्कूलों के प्राचार्य एवं अध्यापिका वर्ग, और फिरोजपुर छावनी व शहर के दानी सज्जनों, आर्य अनाथालय के कर्मचारी व आश्रम के बच्चों ने खूब बढचढ़ कर भाग लिया।

हवन-यज्ञ के पश्चात भजनों ने आये हुए जनसमुह का मनमोह लिया! जल-पान के साथ कार्य-क्रम का समापन हुआ। यह क्रार्यकर्म आर्य रत्न माननीय श्री पूनम सूरी जी प्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के शुभ आशीर्वाद से ही संभव हुआ।

आर.आर. बावा डी ए वी बटाला की स्वर्णजयन्ती स्मारिका का मुख्यालय में हुआ विमोचन

आर.आर.बावा डी ए वी कालेज फॉर गर्ल्ज, बटला की 'स्वर्णजयन्ती स्मारिका का विमोचन आर्य रत्न डा. पूनम सूरी जी, अध्यक्ष, डी.ए.वी. कालेज प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली द्वारा डी. ए.वी. कालेज प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली के सभागार में एक विशेष कार्यक्रम में किया गया।

इस विषय में विस्तृत जानकारी प्रदान करते हुए कालेज की प्रिंसीपल प्रो.डा. (श्रीमती) अजय सरीन ने बताया कि 50 वर्षो में यह संस्थान वटवृक्ष की भान्ति विकसित होकर नगर एवं क्षेत्रवासियों, विशेष रूप से नारी- शिक्षा का भव्य केन्द्र बन गया है जो न केवल शिक्षा अपितु पाठयेत्तर गतिविधियों सहित सामज के उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान देता हुआ अपने क्षेत्र में एक सुविख्यात संस्था बन गई है।

कार्यक्रम का शुभारम्भ डी ए वी गान द्वारा किया गया। इस अवसर पर विशेष श्री आर. एस. शर्मा जी महामन्त्री, डी ए वी कालेज प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली सहित अन्य पदाधिकारी भी विशेष रूप से उपस्थित थे जिनमें श्री महेश चोपड़ा जी, श्री प्रबोध महाजन जी, श्री टी आर गुप्ता जी, श्री एम एल सेखडी जी, श्री बी के मित्तल जी, श्री सतीश शर्मा जी, के अतिरिक्त मुख्यालय सभी निरेशक तथा मुख्य अधिकारी उपस्थित हुए।

श्री सतीश शर्मा, निदेशक (कालेजिज) डी ए वी कालेज प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली ने कालेज के विभिन्न संकायों में वृद्धि के लिए तथा प्रिंसीपल सहित स्टाफ की मेहनत, कर्मठता एवं निष्ठा की सहारना करते हुए, कालेज को डी ए वी कालेज प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली की एक महत्वपूर्ण संस्था कहकर सम्बोधित किया।

अपने अध्यक्षीय-भाषण में आर्य रत्न डा. श्री पूनम सूरी जी ने कहा कि इसी प्रकार हमें अभी ओर आगे बढ़ते जाना है यह 50 साल के बाद, अब आगे फिर 50 साल के लिए डट जाओ क्योंकि प्रगति का क्रम कभी रुकता नहीं है।" प्रिंसीपल महोदया ने सभी महानभावों का धन्यवाद किया।

डी.ए.वी. नाभा में हुआ महर्षि दयानन्द सरस्वती निर्वाण दिवस का आयोजन

डी.ए.वी. सैंटेनरी पब्लिक स्कूल नाभा एवम् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा पंजाब के तत्वावधान में **"महर्षि दयानन्द सरस्वती निर्वाण दिवस"** का आयोजन किया गया। इस अवसर पर विद्यालय में प्रातः काल की सभा में विद्यालय के अध्यापक रोहित शास्त्री ने महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए सभी को ऋषि दयानन्द के त्यागमय जीवन के बारे में अवगत कराया

श्री रोहित शास्त्री ने हवन सम्पन्न करवाया जिसमें कक्षा पांचवी एवम् छठी तक के छात्रों ने मन्त्रों का सस्वर पाठ किया। साथ ही विद्यालय द्वारा **आर्य युवा समाज** का गठन किया गया। जिसमें सभी छात्रों ने सभा में प्रविष्ट होने की व सेवा भाव से काम करने के साथ साथ दान की भावना को जीवन में धारण करने की शपथ लेते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के अधूरे स्वप्न को पूरा करने का वचन लिया।

प्रधानाचार्य मंजुला सहगल ने सभी विद्यार्थियों व विद्यालय परिवार को दीपावली पर्व की मंगल कामनाएं देते हुए इस पर्व की बधाई देते हुए बताया की यह पर्व प्रकाश का पर्व है इसे हम केवल पटाखों का पर्व न मानें अपितु महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए गए वेद ज्ञान को लोगों तक पहुंचाने का प्रयास करना चाहिए। जिससे समाज में ज्ञान का प्रकाश फैल सके। अन्त में प्रधानाचार्या ने **आर्य युवा समाज** के सभासद् छात्रों को शुभाशीष देते हुए कहा की सभी महर्षि दयानन्द सरस्वती के सपने को पूरा करने में अपना योगदान देते हुए समाज की व राष्ट्र की उन्नति में सहयोग हमें सहयोग देना चाहिए।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक - **पूनम सूरी**